श्री काली नित्यार्चन

श्रीकाली-नित्यार्चन

*

सम्पादक
'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

प्रकाशक
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपी-देवी मार्ग, प्रयागराज-२११००६

अनुदान १५/-

उपयोगी पुस्तकें

अनुक्रमणिका

दो शब्द

दश महा-विद्याओं में भगवती 'काली' का स्थान सर्व-प्रथम आता है। इसी से उन्हें 'आद्या' भी कहते हैं। आद्या काली का विस्तृत विवरण 'श्रीकाली-कल्पतरु' में प्रकाशित हो चुका है। उनके प्रातः-स्मरण, कवच, हृदय, सहस्रनाम, उपनिषद्, आदि का भी प्रकाशन 'श्रीकाली-स्तव-मञ्जरी' नामक पुस्तक में विस्तृत हिन्दी-व्याख्या सहित किया जा चुका है।

'मन्त्र-कोष' के अन्तर्गत भगवती काली के विविध स्वरूपों के प्रायः सभी मन्त्र उद्धार-सहित उनके ऋषि आदि के विवरण एवं ध्यान के साथ संगृहीत कर दिये गए हैं। इस प्रकार साधकों के लाभार्थ पर्याप्त साहित्य सुलभ है।

भगवती दक्षिण कालिका की प्रस्तुत नित्यार्चन-पद्धति मिथिला के स्वर्गीय श्री श्यामानन्दजी की कृपा से प्राप्त हुई थी। इसकी उपयोगिता इसी से स्पष्ट है कि यह इसका चौथा संस्करण है।

साधकों की सुविधा के विचार से इस वार अधिक बड़े अक्षरों में मन्त्र और श्लोकादि छापे गये हैं। भगवती काली के पूजन-यन्त्र का रेखा-चित्र भी पूर्व-वत् दे दिया गया है। हमें विश्वास है कि इससे सभी बन्धु लाभान्वित होंगे।

अन्त में हम स्व० श्री श्यामानन्द जी की पुण्य स्मृति में अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

वासन्तिक नवरात्र, २०४२ —सम्पादक

भगवती श्री काली का पूजन-यन्त्र
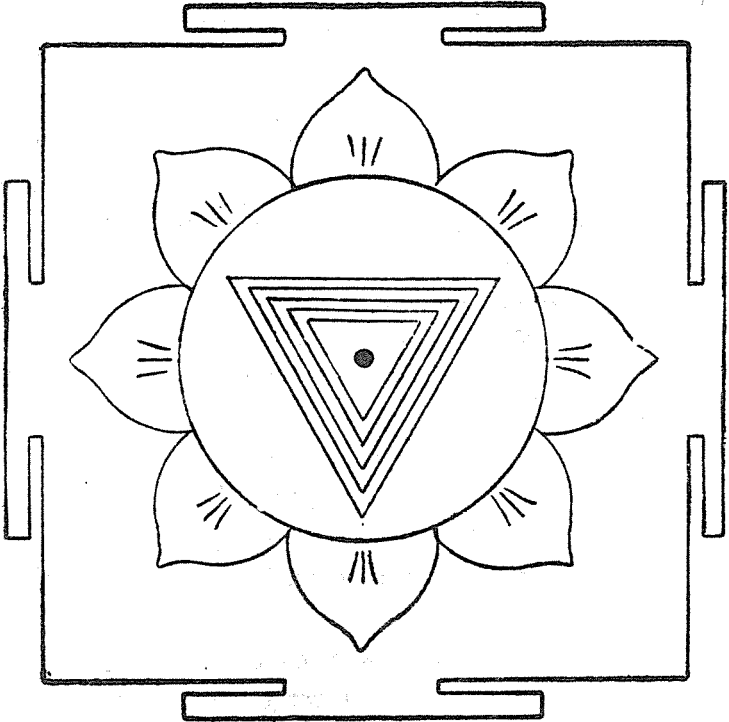
आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्-बहिर्न्यसेत् ।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोण-त्रयमुत्तमम् ।।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सु-लक्षणम् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।

श्रीकाली–नित्यार्चन

प्रातः–कृत्य

सूर्य्योदय से पूर्व रात के अन्तिम प्रहर के तीसरे भाग को प्रातःकाल कहते हैं। यामल के अनुसार सूर्य्योदय से दो खण्ड अर्थात् ४८ मिनट पूर्व का समय ब्राह्म-मुहूर्त्त होता है। इस समय की कर्तव्यता को प्रातः-कृत्य कहते हैं। इसके न करने से सारी दिन-चर्य्या निष्फल हो जाती है। इसी समय शय्या को छोड़ आवश्यकता और अभ्यास के अनुसार गुरु, गणेश तथा इष्ट-देवता को प्रणामकर अपने मूलमन्त्र से मन की एकाग्रता के हेतु कम-से-कम तीन बार प्राणायाम करे। प्राणायाम करने से मन की एकाग्रता के अतिरिक्त आयु बढ़ती है और शरीर नीरोग रहता है। यह निम्न प्रकार किया जाता है—

प्राणायाम

मूल-मन्त्र का जप करते हुये पूरक करे अर्थात् धीरे-धीरे पूरा श्वास ले। फिर जप करते हुए कुम्भक करे अर्थात् वायु (श्वास) को रोके रहे और तब जप करते हुये धीरे-धीरे रेचन करे अर्थात् पूरी तरह से वायु बाहर कर दे। यह क्रिया उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकार की होती है। उत्तम श्रेणी के प्राणायाम के पूरक में १६, कुम्भक में ६४ और रेचक में ३२ बार मन्त्र का जप करना होता है। मध्यम श्रेणी के प्राणायाम में इसका आधा अर्थात् ८ बार पूरक में, ३२ बार कुम्भक में और १६ बार रेचक में जप किया जाता है। अधम श्रेणी के प्राणायाम में क्रमशः ४, १६ और ८ बार ही जप करना कहा

गया है । ऐसा कम-से-कम तीन बार करना होता है। इसके पश्चात् ऋष्यादि-न्यास किया जाता है। जैसे एकाक्षर काली-मन्त्र 'क्रीं' का ऋष्यादि-न्यास निम्न प्रकार है—

विनियोग

अस्य श्रीदक्षिण-कालिका-मन्त्रस्य श्रीमहाकाल-भैरव ऋषिः। उष्णिक् छन्दः। श्रीदक्षिण-कालिका देवता। कं बीजं। ईं शक्तिः। रं कीलकं। चतुर्वर्ग-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास

श्रीमहाकाल-भैरव-ऋषये नमः शिरसि

दक्षिण अंगुष्ठ से

उष्णिक्-छन्दसे नमः मुखे

मध्यमा-अनामा से

श्रीदक्षिण-कालिका-देवतायै नमः हृदये

तर्जनी-मध्यमा-अनामिका-कनिष्ठा से

कं बीजाय नमः गुह्ये

तत्व-मुद्रा से

ईं शक्तये नमः पादयोः

मध्यमा से

रं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे

करतल-द्वय से

चतुर्वर्ग-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

दोनों हाथों की अञ्जलि बनाकर

ऋष्यादि-न्यास के बाद कर-न्यास, षडङ्ग-न्यास और व्यापक-न्यास निम्नलिखित प्रकार से किये जाते हैं—

कर-न्यास

क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । क्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । क्रैं अनामिकाभ्यां हुं । क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट् । क्रः करतल - कर-पृष्ठाभ्यां फट् ।

षडङ्ग-न्यास

क्रां हृदयाय नमः

अनामा-मध्यमा-तर्जनी से

क्रीं शिरसे स्वाहा

अनामा-मध्यमा-तर्जनी से

क्रूं शिखायै वषट्

मूठी बाँधकर अंगूठे से

क्रैं कवचाय हुं

दोनों कर-तलों से

क्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्

तर्जनी-मध्यमा-अनामा से

क्रः अस्त्राय फट्

दक्ष तर्जनी-मध्यमा से बाईं हथेली में फट्-कार कर

व्यापक-न्यास

यह न्यास मूलमन्त्र पढ़ता हुआ अयुग्म अर्थात् ३, ५ या ७ बार शिर से लेकर पैर तक और पुनः पैर से शिर तक करे ।

गुरु-ध्यानादि

इस तरह अपनी चित्त-वृत्ति को यथार्थ गुरु महाकाल, मन्त्र और देवता में स्थिर करे । अब यह समझे कि शरीर-स्थित ब्रह्माण्ड अर्थात् सिर के सबसे अग्र-भाग में हजार दलवाले अधोमुख कमल की कर्णिका अर्थात् बिचले गोल हिस्से से, जिसमें वीज होते हैं, संलग्न अर्थात् नित्य अविना-भाव-सम्बन्ध से सम्बद्ध कुण्डलनी अर्थात् प्राण-शक्ति के सहस्रार तक जाने के रास्ते अर्थात् चित्रिणी नाड़ी से युक्त श्वेतवर्ण का बारह दल का एक अद्भुत कमल है, जो ऊर्ध्व-मुख है और 'ह-स-ख-फ्रें ह-स-क्ष-म-ल-व-र-यूं' इन बारह अक्षरों से भूषित है अर्थात् उसकी एक-एक पंखुड़ी पर एक-एक रहस्य-गर्भ अक्षर है । इस पद्म को गुरु-चक्र कहते हैं । कोई-कोई इसको हंस-पीठ भी कहते हैं। इस शुक्ल-वर्ण के कमल पर सुधा-सागर है, जिसमें स्थित मणि-द्वीप पर रत्न-पीठ है । इस पीठ पर सोलह-सोलह अक्षरों की भुजाओंवाला एक त्रिकोण है । यह इस प्रकार है कि प्रथम बाईं भुजा 'अ' से लेकर 'अः' तक, ऊपर की भुजा 'क' से लेकर 'त' तक और दाहिनी भुजा 'थ' से लेकर 'स' तक के सोलह-सोलह अक्षरों की है । इस त्रिकोण के भीतरी तीन कोणों में 'ह' 'ल' और 'क्ष' ये तीन अक्षर अवस्थित हैं । त्रिकोण के मध्य में नाद और विन्दु है । इसी नाद-विन्दु पर परम-हंस बैठा है । इस हंस पर गुरु-रूपी अन्तरात्मा अपने पैर रखे है । इस हंस का शरीर ज्ञान-मय है, आगम और निगम-रूपी दो पङ्ख, प्रकाश और विमर्श-शक्ति-रूपी दोनों पैर, प्रणव-रूपी चञ्चु और काम-कला-रूपी कण्ठ है । इस हंस-पीठ पर सशक्ति गुरु का ध्यान किया जाता है । यथा—

नीलाम्बरं नील-विलेप-युक्तं शंखादि-भूषा-सहितं त्रिनेत्रम् । वामाङ्ग-पीठ-स्थित-नीलशक्ति वन्दामि वीरं करुणा-निधानम् ।।

ब्रह्मानन्दं परम-सुखदं केवलं ज्ञान-मूर्तिम्
द्वन्द्वातीतं गगन-सदृशं तत्वमस्यादि-लक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वदा साक्षि-भूतम्
भावातीतं त्रिगुण-रहितं सद्-गुरुं तं नमामि ।।

इस तरह सशक्ति गुरु का ध्यान करके मानस-पूजन करे । यह पञ्च-तत्वात्मकी पूजा दोनों हाथों से पञ्च मुद्राएँ दिखा कर इस प्रकार करे—

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं स-शक्तिकाय
श्रीगुरवे समर्पयामि नमः —गन्ध-मुद्रा से
ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पं स-शक्तिकाय०—पुष्प-मुद्रा से
ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं स-शक्तिकाय०—धूप-मुद्रा से
ॐ रं तेजोमयं दीपं स-शक्तिकाय०—दीप-मुद्रा से
ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं स-शक्तिकाय०—तत्व-मुद्रा से

तब यथा-शक्ति गुरु-पादुका मन्त्र का जप करे । लघु-पादुका-मन्त्र यह है—

ऐं ह्रीं श्रीं श्रीअमुकानन्द-नाथ श्रीअमुकी अम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

स्थूल पादुका-मन्त्र अगले पृष्ठ पर देखें—

ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहखफ्रें सहक्षमलवरयीं ह्सौः स्हौः अमुकानन्द-नाथ श्रीअमुकी अम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।[1]

उक्त मन्त्र का जप कम-से-कम बारह बार गुरु-चक्र के बारहों दलों पर एक-एक बार अवश्य करना चाहिए। इसी प्रकार ९ बार प्रत्येक दल में जप करने से १०८ की संख्या पूरी होती है। इसके बाद जप का समर्पण करे। यथा—

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं।
सिद्धिर्भवतु मे देव ! त्वत्-प्रसादान्महेश्वर ॥
ॐ इदं जपं श्रीगुरवे समर्पयामि नमः ॥

इस मन्त्र से गुरु के दाहिने हाथ में मनसा जप-समर्पण करे। इसके पश्चात् गुरु-स्तोत्र का पाठ कर निम्नलिखित श्लोक-मन्त्रों से गुरु को शिव समझ कर प्रणाम करे—

ॐ अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।

---

[1] गुरु-पादुका-मन्त्र तीन प्रकार का है—लघु-पादुका, स्थूल वा मध्य-पादुका और वृहत् वा महा-पादुका। इनमें कुल और क्रम-भेद से कुछ विभिन्नता है। यहाँ दो प्रकार के पादुका-मन्त्र दिये गये हैं, कारण वृहत्पादुका के अधिकारी प्रायः नहीं हैं।

यहाँ गुरु-पादुका-मन्त्र का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार पादुका—जूते, खड़ाऊँ इत्यादि से पैर की काँटे इत्यादि से रक्षा होती है, उसी प्रकार संसार-यात्रा के समय विघ्न-रूपी काँटों से यह मन्त्र साधक की रक्षा करता है।

अर्थात् जिन्होंने अज्ञान-रूपी तिमिर से ज्योति-विहीन मेरी आँखों को ज्ञान-रूपी अञ्जन लगाकर खोल दिया है, उन गुरु-देव को नमस्कार है।

ॐ अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरं।

तत्प दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।

अर्थात् जि चर और अचर अर्थात् चैतन्य और जड़-मय विश्व को चारं फ से घेरकर व्याप्त कर रखनेवाले 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' . ंविद्या, विद्या, आनन्द और तुरीय-पादों का ज्ञान दिया है, उन गुरुदेव को नमस्कार है।

ॐ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुरेव पर-ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा (इच्छा-शक्ति), विष्णु (ज्ञान-शक्ति) और महेश्वर (क्रिया-शक्ति) हैं। गुरु ही परब्रह्म (धर्मी शक्ति) हैं, ऐसे निर्द्वन्द्व गुरु को नमस्कार है।

इष्ट-ध्यान

तब उत्तम साधक ब्रह्म-रन्ध्र में, मध्यम साधक आज्ञा-चक्र अर्थात् भ्रू-मध्य में और शिशिक्षु साधक हृदय में अपने इष्ट-देवता का ध्यान करे। [2] यथा—

---

[2] योग-शिखोपनिषत् (श्रुति) का आदेश भी ऐसा ही है कि चित् परा-शक्ति ब्रह्मरन्ध्र में सदा रहती है। यही चिच्छक्ति के रूप में ललाट के अग्र-भाग में रहती है और यही नाद-रूप में ललाट के मध्य में तथा हृदय में स्थूल रूप में रहती है। ध्यान तीन प्रकार के हैं—सृष्टि-कालिक, स्थिति-कालिक और

सद्यश्छिन्न-शिरः कृपाणमभयं हस्तैर्वरं बिभ्रतीं ।
घोरास्यां शिरसां स्रजा सुरुचिरामुन्मुक्त-केशावलिं ।।
सृक्कासृक्-प्रवहां श्मशान-निलयां श्रुत्योः शवालंकृतिं ।
श्यामाङ्गीं कृत-मेखलां शव-करैर्देवीं भजे कालिकाम् ।।

संहार या प्रलय-कालिक। तीनों के विभिन्न मन्त्र हैं और इनके फल भी विभिन्न हैं। साधारणतया चित्रों में जो ध्यान मिलता है, वह संहार-कालिक है, जब महाकाल का भी पर-विन्दु-रूपिणी भगवती से ऐक्य हो जाता है। यह ध्यान प्रधानतः निर्वाण-मुक्ति का देनेवाला है। स्थिति-कालिक ध्यान का चित्र पहले देखने में आता था, अब प्रायः नहीं छपता है। यह ध्यान इस प्रकार का है कि ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर, सदा-शिव—पञ्च-तत्वाधिष्ठातृ देवों (कादि-कुल में इनके नाम अति-काल, कराल, विकराल, कपाल-धृक् और श्रीकाल हैं) के ऊपर भुवनेश महादेव हैं, जिनके नाभि-कमल पर महाकाल की गोद में भगवती हैं। यथा—

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदा-शिवः ।
एतेषां चतुः - पादस्था भुवनेशी विराजते ।।
तस्य नाभि-कमले तु महा-कालेन लालिता ।
आद्या चित्परा काली पूर्ण-ब्रह्म-स्वरूपिणी ।।

सृष्टि-कालिक ध्यान बड़ा रहस्यमय है। यह कहीं स्पष्ट रूप से शास्त्रों में उल्लिखित नहीं है। इस ध्यान में आचार्यों का सिद्धान्त है कि महा-चिता में भगवती महा-काल के संग विपरीत सामरस्य में अवस्थिता हैं। ऐसा ध्यान कर्पूरादि-स्तवराज के आठवें पद्य में मिलता है। अस्तु।

अर्थात् बिजली की ज्योति के सदृश वर्ण (रङ्ग), सिर के बाल खुले और बिखरे, माथे पर अर्ध-चन्द्र, लाल और लप-लपाती जिह्वा को बड़े-बड़े दांतों से दबाकर उसे बाहर निकाले हुई, ओष्ठ-प्रान्त से रक्त-धारा निरन्तर बहती है, तीन आँखोंवाली, कानों में छोटे बच्चों के शव-गहने और चार हाथ हैं—बायें ऊपरी हाथ में खड्ग, निचले में मुण्ड और दाहिने ऊपरी हाथ में अभय-मुद्रा तथा निचले में वर-मुद्रा है, गले में पचास मुण्डों की माला और कमर में शव के हाथों की काञ्ची पहने हुये नित्य युवती-रूप में भगवती काली आनन्दोल्लास करती हैं।

जप

इस प्रकार कम-से-क्रम एक मिनट ध्यान कर गुरु-पूजा-वत् इनका भी मानस पूजन कर वर्ण-माला में कम-से-कम एक सौ आठ बार मूलमन्त्र का, ध्यान करते हुए, जप करे।[३]

---

[३] वर्ण-माला में जप स्थूल और सूक्ष्म दो तरह से होता है। स्थूल रूप यह है—'अं मूलं आं मूलं' से लेकर 'लं मूलं' (क्षकार का सुमेरु होता है)=५०। फिर इन्हीं को विलोम-क्रम से अर्थात् 'लं मूलं हं मूलं सं मूलं षं मूलं' से लेकर 'अं मूलं' तक=५० और अं, कं, चं, टं, तं, पं, यं और शं से ८ बार जप है। सूक्ष्म-क्रम के दो प्रकार हैं। पहला यह है—विशुद्ध चक्र के १६ दलों में १६ स्वरों से १६ बार, अनाहत चक्र के १२ दलों में ककार से लेकर ठकार तक के बारह मातृका वर्णों से १२ बार, मणि-पूर के १० दलों में डकार से लेकर फकार तक की १० मातृकाओं से १० बार, स्वाधिष्ठान के ६ दलों में बकार से लेकर लकार तक की ६ मातृकाओं से ६ बार, मूलाधार के चार दलों में 'व, श, ष, स' इन चार मातृकाओं से ४ बार

जप-समर्पण देवता के निचले बायें हाथ में मन-ही-मन करके ध्यान की धारणा-निमित्त प्रातः-स्मरण स्तोत्र का पाठ करे—

प्रातः-स्तोत्र

ॐ प्रातर्नमामि मनसा त्रिजगद्-विधात्रीं कल्याण-दात्रीं कमलायताक्षीम् । कालीं कलानाथ-कलाभिरामां कादम्बिनी-मेचक-काय-कान्तिम् ॥१॥

और आज्ञा-चक्र के दोनों दलों में 'ह' और 'ल' इन दो मातृकाओं से २ बार। इस प्रकार ५० और इसी को विलोम रीति से करके कुल १०० जप होता है। अब 'अ क च ट त प य श' इन आठ मातृकाओं से रहस्य अष्ट-दल-कमल के दलों में जप करते हैं। हृदय या आज्ञा-चक्र या सहस्रार में, जहाँ इष्ट का ध्यान करते हैं, इसी अष्ट-दल-कमल पर इष्ट का ध्यान होता है। इसका प्रमाण हमें तन्त्रशास्त्र में नहीं मिला है, किन्तु आध्यात्मिक तात्पर्य के मनन से युक्त बोध होता है।

दूसरा प्रकार यह है—सहस्र-दल-कमल के पचास-पचास दल की मण्डलाकार बीस पंक्तियाँ हैं। इसी से ५० × २० = १००० दल हैं। इन्हीं पचास दलों में पचास मातृकायें अवस्थित हैं, जिनमें मूल-मन्त्र की मानसिक प्रतिष्ठा कर जप करते हैं। अष्टोत्तर-सहस्र जप करने में यही क्रम सबसे अच्छा है। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जहाँ स्थूल वर्ण-माला में मातृका का उच्चारण (मानसिक ही सही) होता है, वहाँ सूक्ष्म वर्ण-माला में केवल स्थान और मातृका वर्णों का ध्यान मात्र होता है, उच्चारण नहीं होता। इसी से सूक्ष्म वर्ण-माला में जप करना बहुत कठिन है। अभ्यास से होता है।

जगत्प्रसूते द्रुहिणो यदर्च्चा-प्रसादतः पाति सुरारि-हन्ता । अन्ते भवो हन्ति भव-प्रशान्त्यै तां कालिकां प्रातरहं भजामि ॥२॥

शुभाशुभैः कर्म-फलैरनेक-जन्मनि मे सञ्चरतो महेशि ! माभूत् कदाचिदपि मे पशुभिश्च गोष्ठी दिवानिशं स्यात् कुल-मार्ग-सेवा ॥३॥

वामे प्रिया शाम्भव-मार्ग-निष्ठा पात्रं करे स्तोत्र-मये मुखाब्जे । ध्यानं हृदब्जे गुरु-कौल-सेवा स्युर्मे महा-कालि ! तव प्रसादात् ॥४॥

श्रीकालि, मातः, परमेश्वरि ! त्वां प्रातः समुत्थाय नमामि नित्यम् । दीनोऽस्म्यनाथोऽस्मि भवातुरोऽस्मि मां पाहि संसार-समुद्र-मग्नम् ॥५॥

प्रातः-स्तवं यः पर-देवतायाः श्रीकालिकायाः शयनावसाने । नित्यं पठेत् तस्य मुखावलोकादानन्द-कन्दांकुरितं मनस्स्यात् ॥६॥

१—अर्थात् तीनों भुवनों की रचना करनेवाली, कल्याण की देनेवाली, कमल-सी सुन्दर आँखोंवाली, चन्द्रमा की कला से सुशोभित, सघन मेघ-सी साँवली काली को मैं प्रातःकाल मन से नमन करता हूँ ।

२—संसार से शान्ति पाने के लिए प्रातः-काल में उस काली का भजन करता हूँ, जिसकी पूजा के बल से ब्रह्मा संसार की

सृष्टि करते हैं, विष्णु उसका पालन करते हैं और प्रलय-काल में रुद्र नाश करते हैं।

३—महेशि! अच्छे-बुरे कर्मों के फल से अनेक जन्मों में घूमता हुआ मैं कभी भी पशुओं (अज्ञानियों) का संग न प्राप्त करूँ और हमेशा मैं कुल-क्रम से ही तुम्हारी सेवा करता रहूँ।

४—हे महाकाली! तुम्हारी कृपा से बायीं तरफ मनोनुकूला शक्ति, शिवजी के दिखलाये हुये मार्ग में श्रद्धा, हाथ में पात्र, मुखारविन्द में स्तुति, हृदय में ध्यान, गुरु और कौलों की सेवा, ये सब हों।

५—हे काली! हे मां! हे परमेश्वरि! नित्य मैं सबेरे उठ कर तुम्हें प्रणाम करता हूँ। मैं दीन हूँ, अनाथ हूँ, संसार से व्याकुल हूँ, संसार-रूपी सागर में डूबे हुए मेरी रक्षा करो।

६—सोते से उठकर जो सबसे बड़ी देवता श्री कालिका के प्रातः-स्तव का पाठ करता है, उसका मुख देखने से मन में आनन्द जाग उठता है।

स्तोत्र-पाठ के पश्चात्—

ॐ नमामि सर्व-जननीं मुण्ड-माला-विभूषिताम्।
महा-काल-युतां घोरां कलौ जाग्रत्-स्वरूपिणीम्॥
कालिकां दक्षिणां दिव्यां त्वां नमामि विभूतये।

इस मन्त्र से देवता को प्रणाम करे। तत्पश्चात् समष्टि-रूपिणी चित्परा-शक्ति की व्यष्टि-रूपिणी कुण्डलनी शक्ति—आत्म-ब्रह्म के रूप का चिन्तन करे।[4] यथा—

---

[4] ब्रह्म के चार रूप हैं—पिण्ड-रूप, पद-रूप, विन्दु-रूप और रूपातीत रूप। पिण्ड वा जीव-रूप ही कुण्डलिनी शक्ति

ध्यायेत् कुण्डलिनीं देवीं स्वयम्भू-लिङ्ग-वेष्टिनीम् ।
श्यामां सूक्ष्मां सृष्टि-रूपां सृष्टि-स्थिति-लयात्मिकाम् ।
विश्वातीतां ज्ञान-रूपां चिन्तयेदूर्ध्व-गामिनीम् ॥

भावना-योग

प्राणवायु अर्थात् श्वास को धीरे-धीरे ऊपर खींचते हुए यह भावना करनी चाहिए कि तेज-शक्ति कुण्डलनी[6] मूलाधार कमल को, जिसके चार दलों पर 'व श ष स' मातृकायें हैं और जो अधोमुख है और जिसके त्रिकोण पर अधोमुख स्वयम्भू लिङ्ग है, स्वयम्भू लिङ्ग के रन्ध्र (चित्रिणी विवर) के भीतर जाकर छेदकर, स्वाधिष्ठान-चक्र को, जिसके छः दलों पर 'ब भ म य र ल' मातृकायें हैं, छेदकर मणिपुर चक्र को, जिसके दस दलों पर 'ड' से लेकर 'फ' तक की दश मातृकायें हैं, छेदकर

है। इसका स्थान है ऊर्ध्व-मुखी सहस्र-दल के ऊपर मूलाधार में। यहीं मातृ-योनि के स्वयम्भू लिङ्ग को सर्प के सदृश साढ़े तीन गुणा वेष्टित किए, ब्रह्म-द्वार को ढाँके, कुण्डलिनी सोई है। यह कमल-नाल से भी सूक्ष्म परम ज्योतिष्मती श्याम-वर्णा है।

[6] कुण्डलिनी वा प्राण-शक्ति जब तक सोई रहती है, तब तक मन्त्र में सामर्थ्य आना इत्यादि आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो सकती। इस शक्ति और चित्पर महा-आद्या-शक्ति के ऐक्य का ज्ञान ही साधक का चरम लक्ष्य है, जिसके सिद्ध होने से भोग और मोक्ष दोनों मिलते हैं। यही साधनों का मूल है। मन्त्र-योग, हठ-योग अथवा भावना-योग द्वारा कुण्डलिनी-उत्थान होता है। भावना-योग में मन्त्र और हठ दोनों का सामञ्जस्य होने से सबके लिये सरल है। अतः यहाँ इसी की विधि दी है।

अनाहत चक्र को, जिसके बारह दलों पर 'क' से लेकर 'ठ' तक की १२ मातृकायें हैं, छेदकर विशुद्ध चक्र को, जिसके १६ दलों पर 'अ' से लेकर 'अः' तक की १६ स्वर-मातृकायें हैं, छेदकर आज्ञा-चक्र को, जिसके दलों पर 'ह' और 'ल' मातृकायें है, छेदकर ब्रह्म-रन्ध्र में जाकर शून्य में पर-शिव से मिलती हैं। फिर श्वास रोके हुए किञ्चित् काल तक ऐसी ही भावना करता रहे। तब कुण्डलिनी को अपने स्थान पर लाकर निम्नलिखित मन्त्र से उसे प्रणाम करे—

'ॐ प्रकाशमानां प्रथम-प्रयाणेऽप्यमृतायमानां अन्तः-पदव्यामनु-सञ्चरन्तीमानन्द-रूपाममलां प्रपद्ये।'

इसके पश्चात् अजपा-जप करे। यथा—

अजपा-जप

'ॐ अद्य पूर्वेद्युरहोरात्राचरितमुच्छ्वास-निःश्वासात्मकं षट्-शताधिकमेक-विंशति-सहस्र-संख्याकमजपा-जपमहं करिष्ये'—

आज दिन और रात अर्थात् सारे अहो-रात्र भर में इक्कीस हजार छः सौ श्वास और निःश्वास-रूपी अजपा-जप मैं करूँगा- ऐसा मानसिक संकल्प करके गुरु-चक्र-सहित छहों चक्रों में से प्रत्येक चक्र की अधिष्ठातृ देवताओं का क्रमशः ६००+६०००+६०००+६०००+१०००+१०००+१०००=कुल २१,६०० अजपा जप निम्न मन्त्रों से समर्पित करे —

'ॐ मूलं मूलाधार-चक्रस्थाय गणपतये अजपा-जपानां षट्-शत-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः।'

'ॐ मूलं स्वाधिष्ठान-चक्रस्थाय ब्रह्मणे अजपा-जपानां षट्-सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

'ॐ मूलं मणिपूर-चक्रस्थाय विष्णवे अजपा-जपानां षट्-सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

'ॐ मूलं अनाहत-चक्रस्थाय रुद्राय अजपा-जपानां [illegible]-सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

'ॐ मूलं विशुद्ध-चक्रस्थाय जीवात्मने अजपा-जपानां सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

'ॐ मूलं आज्ञा-चक्रस्थाय परमात्मने अजपा-जपानां सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

'ॐ मूलं सहस्रदल-कमल-कर्णिका-मध्यस्थायै श्री-गुरु-पादुकायै अजपा-जपानां सहस्र-संख्याकं जपं समर्पयामि नमः ।'

इसके बाद प्राणायाम, ऋष्यादि, कर-षडङ्ग-न्यास करे—

प्राणायाम

'हंसः' मन्त्र से पूर्वोक्त क्रम से प्राणायाम करना चाहिये ।

विनियोग

अस्य श्रीअजपा-गायत्री-महा-मन्त्रस्य परमहंस ऋषिः, अव्यक्त-गायत्री छन्दः, परम-हंसो देवता, हं बीजं, सः शक्तिः, सोहं कीलकं, मम अजपा-गायत्री-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास

ॐ हंसात्मने ऋषये नमः —शिर में,

ॐ अव्यक्त-गायत्री-छन्दसे नमः —मुख में,

ॐ परम-हंसाय देवतायै नमः —हृदय में,

ॐ हं बीजाय नमः —मूलाधार में,

ॐ सः शक्तये नमः —पैरों में,

ॐ सोऽहम् कीलकाय नमः —नाभि में,

ॐ मम मोक्षार्थे जपे विनियोगाय नमः—हाथ जोड़े

षडङ्ग-न्यास		कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ह्सां सूर्यात्मने	स्वाहा	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय०
ह्सीं सोमात्मने	,,	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे०
ह्सूं निरञ्जनात्मने	,,	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै०
ह्सैं निराभासात्मने	,,	अनामाभ्यां हुँ	कवचाय०
ह्सौं कनिष्ठ-तनुः सूक्ष्मा-देवी प्रचोदयात्	स्वाहा	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय०
ह्सः अव्यक्त-बोधात्मने	स्वाहा	करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय०

ध्यान—द्यां मूर्धानं यस्य विप्रा वदन्ति,

खं वै नाभिं चन्द्र-सूर्यौ च नेत्रे।

दिग्भिः श्रोत्रे यस्य पादौ क्षितिश्च,

ध्यातव्योऽसौ सर्व-भूतान्तरात्मा॥

अर्थात् अन्तरिक्ष जिसका शिर है, आकाश नाभि अर्थात् मध्य है, चन्द्र और सूर्य दोनों नेत्र हैं, दिशायें कान हैं, पृथ्वी जिसका पैर है, सब जीवों अर्थात् चैतन्य और जड़ सृष्टि के भीतर रहनेवाले ऐसे अन्तरात्मा का चिन्तन करना चाहिए।

इस प्रकार ध्यान करके अजपा-मन्त्र 'हंसः' का यथा-शक्ति जप कम-से-कम १०८ बार करना चाहिए।

अब अपने को इष्ट-देवता वा ब्रह्म से अभिन्न, सर्वदा और सर्वथा सुखी, सच्चिदानन्द-रूप, मुक्त स्वभाववाला अर्थात् आत्माकार वृत्तिवाला समझ कर यह समझे कि 'जो कुछ करती है; मैया करती है, मुझे कुछ नहीं करना है। हम जो लोक-दिखावा करते हैं वा करेंगे, वह सब वही एक करती है। हम जो कुछ भोर से शाम तक और शाम से भोर तक करते हैं वा करेंगे, वह सब उसी की पूजा-स्वरूप है और होगा। हे मातः! तुम्हारी आज्ञा से सांसारिक कार्य में प्रवृत्त होता हूँ।' यथा—

अहं काली न चान्योऽस्मि ब्रह्मैवाहं न शोक-भाक्।
सच्चिदानन्द-रूपोऽहं नित्य-मुक्तः स्वभाव-वान्॥
पर-देव्या हृदिस्थेन प्रेरितेन करोम्यहम्।
न मे किञ्चित् क्वचिद् वापि कृत्यमस्ति जगत्-त्रये॥
प्रातः-प्रभृति सायान्तं सायान्तः प्रातरं पुनः।
यत्करोमि जगन्मातस्तदस्तु तव पूजनम्॥
त्रैलोक्य-चैतन्य-मये! सुरेशि! श्रीविश्व-मातर्भवदाज्ञयैव।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसार-यात्रामनुवर्तयिष्ये॥

भूमि पर पैर रखने की क्षमा-प्रार्थना—

'ॐ समुद्र-मेखले ! देवि ! पर्वत-स्तन-मण्डले !

विष्णु-पत्नि ! नमस्तुभ्यं पाद-स्पर्शं क्षमस्व मे ।।'

इस मन्त्र-द्वारा करके शौचादि के हेतु बाहर जाय ।

दन्त-धावनादि

दातून तोड़ने के लिए वनस्पति देवता की प्रार्थना करे—

ॐ आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशु-वसूनि च ।

ब्रह्म-प्रज्ञां च मे वाञ्च त्वन्नो धेहि वनस्पते !

तब दातून इस मन्त्र से करे—

'ॐ क्लीं काम-देव सर्व-जन-प्रियाय नमः ।'

तब मूल-मन्त्र से अथवा तीनों तत्वों से, यथा—

'ॐ आत्म-तत्वाय स्वाहा, ॐ विद्या-तत्वाय स्वाहा, ॐ शिव-तत्वाय स्वाहा,'

इन मन्त्रों से तीन बार आचमन [6] करे ।

---

[6] साधारण आचमन के नियम और फल ये हैं—ब्राह्मणों को अंगुलियों के गिरहों को फैलाकर गाय के कान के सदृश दाहने हाथ को बनाकर जल लेकर अँगूठे और कनिष्ठा को अलग कर शेष तीन अँगुलियों की तलहथी से आचमन करना चाहिये और जितने पानी में कलाई डूब सके, उतना पानी पीना चाहिये। हृदय-पर्यन्त जल से ब्राह्मण, कण्ठ तक से क्षत्रिय, मुख तक से वैश्य और शूद्र होठों से जल छूने से पवित्र होते हैं ।

वैज्ञानिक तात्पर्य के आधार पर आचमन का फल प्राण की पुष्टि और आध्यात्मिक तात्पर्य के आधार पर इष्ट-धारणा की पुष्टि है ।

तदनन्तर कुल-दर्भ (कुल-कुशा) पहने, इसको पवित्री-धारण कहते हैं। तर्जनी में चाँदी और अनामिकाओं में (वीराचार में दोनों हाथों से समान रूप से कर्म करने के कारण दोनों हाथों में पवित्रता के लिए धारण करना उचित है) सोने की अँगूठियाँ धारण करे। चाँदी की अँगूठी में मूलमन्त्र के बीज खुदे हों और सोनेवाली में शक्ति खुदी हो।

पवित्री धारण कर स्नान का संकल्प इस प्रकार करे---

ॐ अद्यामुके मासि अमुके पक्षे अमुक-तिथौ अमुक-गोत्रः, श्रीअमुक - शर्माऽहम् श्रीमद्-दक्षिण-कालिका-प्रीतये स्नानमहं करिष्ये।

स्नान

जिस प्रकार बाह्य पूजा से पूर्व मानस पूजा आवश्यक है, उसी प्रकार बाह्य स्नान से पूर्व मानस स्नान आवश्यक है।[7]

---

[7]गन्धर्व तन्त्र के अनुसार स्नान तीन प्रकार के होते हैं---१ आन्तर, २ बाह्य और ३ मानस।

वाह्य और मानस दोनों स्नान सात प्रकार के हैं---१ मांत्र, २ भौम, ३ आग्नेय, ४ वायव्य, ५ दिव्य, ६ वारुण और ७ मानस। मान्त्र स्नान अति शीत काल में, जलाभाव में, अस्वस्थ अवस्था में, बूढ़ेपन में किया जाता है। इसकी विधि यह है कि हाथ-पैर धो आचमन कर दिग्बन्धन कर जल-स्पर्श कर ले। भौम स्नान में आपोहिष्ठादि मन्त्र से देह का मार्जन कर ले। आग्नेय भस्म-स्नान है, जो शैव के हेतु प्रधान है। वायव्य स्नान गोधूलि से सायंकालिक स्नान है। दिव्य स्नान सूर्य-किरण-स्नान है। वारुण स्नान जल-स्नान है।

मानस है ध्यान-स्नान, जिसकी विधि है प्राणायाम करके कुण्डलिनी का पर-शिव से सामरस्य कराना। इस सामरस्य से उत्पन्न अमृत-धारा से अपने समस्त शरीर को धोवे। यह स्नान सर्वश्रेष्ठ है। इसको करके बाह्य वा वारुण स्नान करे—जल में स्वाग्र त्रिकोण लिखकर अंकुश मुद्रा से अर्थात् तर्जनी को बिलकुल टेढ़ा कर इन मन्त्रों से तीर्थों का आवाहन करे—

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति !
नर्मदे सिन्धु कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥
ब्रह्माण्डे देव-तीर्थाणि करैः स्पृष्टानि ते रवे !
तेन सत्येन मे देव ! तीर्थं देहि दिवाकर ॥
आवाहयामि त्वां देवि ! स्नानार्थमिह सुन्दरि !
एहि गंगे ! नमस्तुभ्यं सर्व-तीर्थ-समन्विते ॥

इसके बाद जल का धेनु-मुद्रा से अमृतीकरण कर चुपचाप बारह बार सूर्य को अर्घ्य देकर अपनी इष्ट-देवता का जल में कच्छप-मुद्रा से आवाहन करे। उसी जल से 'मूलं अमुक-देवतां पूजयामि नमः' इस मन्त्र से उसका पूजन करे। जल को द्रव-मयी भगवती समझ कर स्नान करे।

तब १०८ बार जपकर देवता को समर्पण करे। फिर कुम्भ वा तत्व-मुद्रा से दस बार शिर पर मूल-मन्त्र से अभिषेक कर संहार-मुद्रा से देवता का विसर्जन कर गौड़ और केरल-क्रमवाला हृदय में तथा काश्मीर-क्रमवाला ब्रह्मरन्ध्र में देवता का आवा-हन करे। तत्पश्चात् वैदिक सन्ध्या और तर्पण (अधिकारी होने पर) कर तांत्रिकी संध्या इस प्रकार करे—

तांत्रिकी सन्ध्या

जल में स्वाग्र त्रिकोण लिखकर तीर्थों का आवाहन करे। धेनु-मुद्रा से 'सं वं' बीज पढ़ उसे अभिमन्त्रित करे। उसी जल से मूल-मन्त्र से तीन बार आचमन करे। तब प्राणायाम-त्रय कर ऋष्यादि व्यापक न्यासों को करे। उस जल को बाँयें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से ढककर 'हंयंरंलंवं' इन पञ्च-वीज-मन्त्रों के जप से अभिमन्त्रित करे। गलितोदक (नीचे गिरते हुए जल) से मूल-मन्त्र पढ़कर सात बार तत्व-मुद्रा से अपने सिर पर अभिषेक करे। तत्पश्चात् अवशिष्ट जल को दाहिने हाथ में ले उसे तेजोरूप समझे। श्वास के द्वारा उस तेज को अपने शरीर के अन्दर ले जाकर अघमर्षण अर्थात् अपने को पाप-रहित करे। फिर निःश्वास-द्वारा पापों को निकाल उक्त जल में रखे। 'फट्' मन्त्र से वज्र-शिला (पत्थर) बुद्धि से उस (मल वा पाप-रूपी जल) को फेंक दे। फिर हाथ धो आचमन कर जल में अपने आगे त्रिकोण लिखे। धेनु-मुद्रा से जल का अमृतीकरण करे। फिर उस जल में इष्ट का ध्यान कर आवाहन करे। जल से ही 'मूलं अमुक-देवतां पूजयामि नमः' इस मन्त्र से पूजन कर दोनों हाथों द्वारा तत्व-मुद्रा से निम्न मन्त्रों से एक-एक बार शिर पर तर्पण करे---

ॐ देवांस्तर्पयामि नमः। ॐ ऋषींस्तर्पयामि नमः। ॐ पितॄंस्तर्पयामि नमः। ॐ दिव्यौघ-गुरूँस्तर्पयामि नमः। ॐ सिद्धौघ-गुरूँस्तर्पयामि नमः। ॐ मानवौघ-गुरूँस्तर्पयामि नमः। ॐ कुल-गुरूँस्तर्पयामि नमः।

अब निम्न मन्त्रों से सिर पर ही तीन-तीन बार तर्पण करे

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं श्रीगुरु श्रीअमुकानन्दनाथ श्रीअमुकी देव्यम्बा श्रीपादुकां तर्पयामि नमः ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं श्रीपरम-गुरु श्रीअमुका...श्रीपादुकां० ।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं श्रीपरापर-गुरु श्रीअमुका...श्रीपादुकां०।

ॐ ऐं ह्लीं श्रीं श्रीपरमेष्ठि-गुरु श्रीमहाकालानन्द-नाथ श्रीपादुकां० ।

तब हृदय वा आज्ञा-चक्र वा ब्रह्म-रन्ध्र में, जिस श्रेणी का साधक हो, तीन बार निम्न मन्त्र से तर्पण करे---

मूलं सायुधां स-वाहनां स-परिवारां श्रीमहा-काल-सहितां श्रीमद्-दक्षिण-कालिकाम्बां तर्पयामि स्वाहा ।

तब मार्तण्ड-भैरव (सूर्य) को ताँबे के पात्र से रक्त-चन्दन, दूर्वा, जवा वा अन्य लाल फूल और अक्षत-मिश्रित जल से निम्न मन्त्र से अर्घ्य दे---

१. ह्लीं हंसः मार्तण्ड-भैरवाय प्रकाश-शक्ति-सहिताय स्वाहा इदमर्घ्यम् ।

अब इष्ट-देवता को उक्त ताम्र-पात्र से निम्न मन्त्रों से तीन-तीन बार अर्घ्य दे---

२. ह्रीं ह्लीं हूं हंसः सूर्य-मण्डलस्थायै श्रीमद्-दक्षिण-कालिकायै नमः ।

३. मूलं उद्यदादित्य (वा मध्याह्नादित्य वा सायाह्नादित्य) मण्डल-मध्य-वर्तिन्यै नित्य-चैतन्यो-

दिताये श्रीमद्-दक्षिण-कालिकायै इदमर्घ्यं स्वाहा ।

अब गायत्री का यथा-कालिक ध्यान करे । यथा—

प्रातः ध्यान

प्रातर्ब्राह्मीं रक्त-वर्णां द्विभुजां च कुमारिकाम् ।
कमण्डलुं तीर्थ-पूर्णमक्ष-मालां च बिभ्रतीम् ॥
कृष्णाजिनाम्बर-धरां हंसारूढां शुचि-स्मिताम् ।

मध्याह्न-ध्यान

मध्याह्ने तां श्याम-वर्णां वैष्णवीं च चतुर्भुजाम् ।
शंख-चक्र-गदा-पद्म-धारिणीं गरुडासनां ॥
पीनोत्तुङ्ग-कुच-द्वन्द्वां वन-माला-विभूषिताम् ।
युवतीं सततं ध्यायेन्मध्ये मार्तण्ड-मण्डले ॥

सायं-ध्यान

सायाह्ने वरदां देवीं गायत्रीं संस्मरेद् यतिः ।
शुक्लां शुक्लाम्बर-धरां वृषासन-कृताश्रयाम् ॥
त्रिनेत्रां वरदां पाशं शूलं च नृ-करोटिकाम् ।
बिभ्रतीं कर-पद्मैश्च वृद्धां गलित-यौवनाम् ॥

इस प्रकार ध्यान कर पहले 'काली-गायत्री मन्त्र' का कम-से-कम दस बार जप कर विद्या-राज्ञी (दक्षिण काली का विशेष मन्त्र) या एकाक्षर वीज-मन्त्र का, जो भी मूल-मन्त्र हो, १०८ या कम-से-कम दश बार जप करे । काली-गायत्री मन्त्र यह है—

ॐ कालिकायै विद्महे श्मशान-वासिन्यै धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात् ।

तब जल से बाहर आकर धोती और उत्तरीय धारण कर 'क्रम-स्तव'[8] का पाठ करता हुआ घर आवे।

तिलक

अब साधक घर में आकर अपने क्रम के अनुसार तिलक[9] धारण करे।

[8]क्रम-स्तव के लिये "श्री काली-स्तव-मञ्जरी" देखें।

[9]कुल-तिलक अर्थात् अपने इष्ट-देवता के चिह्न से अङ्कित होकर ही पूजन करे, अन्यथा देवता को असन्तोष होता है। काली महाविद्या का महा-नील-क्रम है। इसके अनुसार कम-से-कम भ्रूमध्य में सिन्दूर अथवा रक्त चन्दन का विन्दु और इसके ऊपर निश्छिद्र त्रिपुण्ड्र धारण करना उचित है। माया-वीज से विन्दु और गुरु-पादुका-मन्त्र से त्रिपुण्ड्र करे। पूर्णाभिषिक्त के निमित्त श्मशान-भस्म ही विहित है।

आरोग्य-कामनावाले "ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टि-वर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥" इस मन्त्र से ललाट, कंठ-कूप, शिर, बाहु-मूल और हृदय में बिन्दु धारण करें। (परानन्द सूत्र—पत्र ६६)

अर्चन-विधान

[१]

सामान्यार्घ्य-स्थापन

पूर्व-कृत शुद्ध स्थान में पूजा-वेदी से बाहर 'त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्र' यन्त्र रक्त-चन्दन से लिखे अथवा तांबे के बने यन्त्र को 'फट्' मन्त्र से प्रक्षालित कर उस पर 'ह्रीं आधार-शक्तिभ्यो नमः' से पूजन करे। तब गुरु-क्रम के अनुसार त्रि-पादुका या वर्तुलाकार (गोल) आधार को 'फट्' से प्रक्षालित कर यन्त्र पर रखे। इस आधार पर 'फट्' से प्रक्षालित शंख या ताम्र-पात्र को रख उसमें 'नमः' मन्त्र से शुद्ध जल भरे। फिर उस जल में अंकुश-मुद्रा से 'ॐ गंगे च०' इत्यादि मन्त्र से तीर्थों का आवाहन कर 'ॐ' मन्त्र से उसमें गन्ध-पुष्प डाले और दश बार 'ॐ' का जप कर जल को अभिमन्त्रित करे। इसी सामान्यार्घ्य के जल से पूजा-गृह के द्वार का अभ्युक्षण कर द्वार-देवताओं की पूजा करे।

द्वार-पूजा

द्वार के ऊपरी भाग में 'ॐ गां गणेशाय नमः,' वाम-भाग में 'ॐ क्षां क्षेत्रपालाय नमः,' दक्षिण भाग में 'ॐ वां वटुकाय नमः,' नीचे 'ॐ यां योगिनीभ्यो नमः' से और तब चारों स्थानों पर 'गां गंगायै नमः, यां यमुनायै नमः, श्रीं लक्ष्म्यै नमः' और 'ऐं सरस्वत्यै नमः' से पूर्वादि-क्रम से पूजन करे।

पूजनारम्भ

इसके बाद 'ॐ ह्रीं विशुद्धौ सर्व-पापानि शमयाशेष-विकल्प-मपनय हूँ फट् स्वाहा' से पैर धोकर पूजा-मण्डप में प्रवेश कर नैऋत-कोण में 'ॐ ब्रह्मणे नमः,' 'ॐ वास्तु-पुरुषाय नमः' से ब्रह्मा और वास्तु-पुरुष का पूजन करे। तब अक्षत, सरसों और तिल लेकर---

ॐ सर्व-विघ्नान् उत्सारय हूँ फट् स्वाहा।

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः।

ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

इस मन्त्र से विघ्नों को दूर करे। फिर भूमि-शोधन इस मन्त्र से सामान्यार्घ्य-जल छिड़ककर करे—'ॐ पवित्र-वज्र-भूमे हूँ हूँ फट् स्वाहा।' तब स्वाग्र[10] त्रिकोण रक्त-चन्दन से लिख कर उसके मध्य में माया-वीज लिखे। इस यन्त्र पर 'ह्रीं आधार-शक्ति अमुक[1] आसनाय नमः' से उसका पूजन कर पृथ्वी से प्रार्थना करे—

'ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका देवि! त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥

तब 'आः सुरेखे वज्र-रेखे हूं फट् स्वाहा' से आसन पर एक मण्डल की कल्पना कर 'ॐ मेरुपृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः,

---

[10] किसी किसी आचार्य के मत में पराग्र त्रिकोण लिखना चाहिये। साधक का जैसा अपना गुरु-क्रम हो, वैसा ही करे।

[11] यहाँ रक्त-कम्बल, व्याघ्र-चर्म इत्यादि जो आसन हो, उसका उल्लेख करे।

कूर्मो देवता आसनोपवेशने विनियोगः' इस मन्त्र को पढ़ते हुए आसन पर सुखासन में बैठे। फिर 'ऐं रः अस्त्राय फट्' से हाथों को धोकर पहिले तत्वाचमन करे—'ॐ आत्म-तत्वाय स्वाहा, ॐ विद्या-तत्वाय स्वाहा, ॐ शिव-तत्वाय स्वाहा'। अब मूल-मन्त्र से तीन बार आचमन करके निम्न प्रकार नित्या-आचमन करे—'ॐ काल्यै नमः, ॐ कपालिन्यैः नमः' पढ़कर अंगुष्ठ-मूल द्वारा ओष्ठ और अधर का मार्जन; 'ॐ कुल्लायै नमः' से हाथ; 'ॐ कुरु-कुल्लायै नमः' से तर्जनी, मध्यमा, अनामिका द्वारा मुख; 'ॐ विरोधिन्यै नमः, ॐ विप्र-चित्तायै नमः' से अंगुष्ठ-तर्जनी से दोनों नासा-पुट; 'ॐ उग्रायै नमः, ॐ उग्र-प्रभायै नमः' से अंगुष्ठ-अनामिका से दोनों नेत्र; 'ॐ दीप्तायै नमः, ॐ नीलायै नमः' से तत्व-मुद्रा से दोनों कान; 'ॐ घनायै नमः' से कनिष्ठा और अंगुष्ठ से नाभि; 'ॐ वलाकायै नमः' से करतल से हृदय; 'ॐ मात्रायै नमः' से सब अंगुलियों से मस्तक; 'ॐ मुद्रायै नमः, ॐ मितायै नमः' से मध्यमा के अग्र-भाग से दोनों बाहु-मूल छू-कर आचमन करे।

तब 'ॐ मणिधरि वज्रिणि महा-प्रतिसरे रक्ष रक्ष (मां) हुं फट् स्वाहा' से शिखा-बन्धन करे। तब 'फट्' मन्त्र पढ़कर वाम पार्ष्णि से भूमि को ठोके। तर्जनी और मध्यमा दोनों अँगुलियों को क्रमशः ऊपर उठाते हुये 'फट् फट् फट्' कहते हुये तीन बार ताली बजाकर विघ्नों को हटावे। मध्यमा से अंगूठे को अपने सिर के चारो ओर दस बार बजाकर दिग्बन्धन करे। तब बायें भाग में 'ॐ गुरवे नमः' से गुरु को प्रणाम करे। फिर 'ॐ गुरु-मण्डलाय नमः' से वहीं गुरु-मण्डल को प्रणाम कर दाहिने भाग में 'ॐ गणेशाय नमः' से गणपति को प्रणाम कर मध्य में

योनि-मुद्रा से इष्ट-देवता को प्रणाम करे। प्रणाम ध्यान-पुरस्सर ही करना चाहिये। तदनन्तर इष्ट-पूजन की आज्ञा इस मन्त्र से ले—

ॐ भैरवाय नमस्तुभ्यं मोक्ष-मार्ग-प्रदर्शिने !
आज्ञां मे दीयतां नाथ ! इष्ट-पूजां करोम्यहम् ॥

विजया-ग्रहण

अब विजया-शोधन कर उसे ग्रहण करे। यथा—मूल-मन्त्र से पात्र में सम्विदा को रखे। 'फट्' से संरक्षण कर 'हूं' से अवगुण्ठन करे। मूल से सामान्यार्घ्योदक से अभ्युक्षण कर विनियोग पढ़े। यथा—अस्य श्रीदक्षिण-कालिका-मन्त्रस्य महाकाल-भैरव ऋषिः, उष्णिक् छन्दः, श्रीमद्दक्षिण-कालिका देवता, ह्रीं बीजं, हूं शक्तिः, क्रीं कीलकं, मम झटिति मेधा-वाग्विलास-सिद्धयर्थे सम्विच्छोधने ग्रहणे च जपे विनियोगः।

पूर्व-वत् ऋष्यादि-न्यास कर विजया का ध्यान करे—

ॐ सिद्धाढ्यां शिव-गेहिनीं कर-लसत्पाशांकुशां भैरवीं।
भक्ताभीष्ट-वर-प्रदान-कुशलां संसार-बन्धश्चिच्छदां ॥
पीयूषाम्बुधि-मन्थनोद्भव-रसां सम्विद्-विलासां परां।
वीराराधित-पादुकां सुविजयां ध्यायेज्जगन्मोहिनीं ॥

शुक्ल (ब्राह्मण) वर्ण विजया-संशोधन मन्त्र—

ॐ सम्विदे ब्रह्म-सम्भूते ब्रह्म-पुत्रि सदानघे !
भैरवाणां च तृप्त्यर्थं पवित्रा भव सर्वदा ॥
ॐ ब्रह्माण्यै नमः स्वाहा।

रक्त (क्षत्रिय) वर्ण शोधन-मन्त्र—

ॐ सिद्धि-मूले प्रिये देवि! हीन-बोध-प्रबोधिनि !
राज-प्रजा-वशङ्करि ! शत्रु-कण्ठ-त्रिशूलिनि ॥
ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा ।

हरित (वैश्य) वर्ण शोधन मन्त्र—

ॐ अज्ञानेन्धन-दीप्ताग्ने ज्वालाग्ने ज्ञान-रूपिणि !
आनन्दस्याहुतिं प्रीतिं सम्यक् ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥
ह्रीं वैश्यायै नमः स्वाहा ।

कृष्ण (शूद्र) वर्ण शोधन-मन्त्र—

ॐ नमस्यामि नमस्यामि योग-मार्ग-प्रबोधिनि !
त्रैलोक्य-विजये मातः ! समाधि-फलदा भव ॥
ॐ ह्रीं शूद्रायै नमः स्वाहा ।

जिस वर्ण की विजया हो, उसी के अनुसार मन्त्र का तीन बार जप करे । तब 'ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृत-वर्षिणि अमृत-माकर्षयाकर्षय सिद्धि देहि देहि सर्वं मे वशमानय स्वाहा ।' मन्त्र का तीन बार जपकर विजया को अभिमन्त्रित करे । फिर विजया के ऊपर ७ बार मूल-मन्त्र जपे । इसमें इष्ट-देवता का मानसिक आवाहन कर धेनु और योनि - मुद्रायें दिखावे । छोटिका से दिग्बन्धन कर पूर्वोक्त रीति से तीन बार ताली बजावे । इष्ट-देवता का मानस पूजन कर तत्व-मुद्रा से गुरु और देवता का तर्पण कर चार बार बिन्दु-स्वीकार क्रमशः इन मन्त्रों से करे—

ऐं आत्म-तत्वेनात्म-तत्वं शोधयामि स्वाहा, क्लीं विद्या-तत्वेन विद्या-तत्वं शोधयामि स्वाहा, सौः शिव-तत्वं शोधयामि स्वाहा, ऐं क्लीं सौः सर्व-तत्वेन सर्व-तत्वं शोधयामि स्वाहा ।

'ऐं वद वद वाग्वादिनि मम जिह्वाग्रे स्थिरीभव सर्व-सत्व-वशङ्करि स्वाहा'—

उक्त मन्त्र से विजया-पान करे । फिर सम्विदा की स्तुति कर प्रणाम करे—

ॐ सम्विद्-देवि ! गरीयसी गुण-मयी वैगुण्य-विध्वंसिनी ।
माया-मोह-मदान्धकार-शमनी ताप-त्रयोन्मूलिनी ॥
वाग्देवी-वदनाम्बुजैक-रसिका सम्बोधिनी दीपिका ।
ब्रह्म-ज्ञान-विवेक-सिद्धि-विजया विज्ञान-मूर्त्यै नमः ॥

तब विजयानन्द-स्तव पढ़े । यथा—

ॐ आनन्द-नन्दिनीं वन्दे सदानन्द-पद-द्वये !
आनन्द-कन्दलीं वन्दे स्वच्छन्द-बोध-रूपिणीं ॥
कलयति कवितां महती कुरुते तत्वार्थ-दर्शनं पुंसाम् ।
अपहरति दुरति-निलयं किं किं न करोति सम्विदुल्लासः॥
सम्विदासवयोर्मध्ये सम्विदैव गरीयसी ।
भक्षिता भव-नाशाय निर्गन्धा बोध-रूपिणी ॥
सुसम्वित् शूलिनी देवी विजया संविदांकुरा ।
वैष्णवी तुलसी तुर्या तेजो-रश्मि-रसेश्वरी ॥

विमला श्वेत-वद्-वैला लक्ष्मी देवी महोदरी ।
समया मोहिनी चैव सिद्धि-मूली महेश्वरी ॥
मातुलानी सिलि-रूपा सिलि-दात्री सरस्वती ।
वाग्वादिनी सदा नित्या आनन्द-पद-दायिनी ॥
यानि चैतानि नामानि सेवयेत् सिद्धि-मूलिकां ।
स लभते परां विद्यां भुक्ति-मुक्तिं च विन्दति ॥
पाण्डित्यं च कवित्वं च मन्त्र-सिद्धिं च विन्दति ।

अब पुष्पों का शोधन इन मन्त्रों से करे---

ॐ शताभिषेक हूं फट् स्वाहा, ॐ पुष्पकेतु राजार्हते शताय सम्यक् सम्बद्धाय, ॐ पुष्पे पुष्पे महा-पुष्पे सुपुष्पे पुष्प-सम्भवे ! पुष्प-चयावकीर्णे हूँ फट् स्वाहा ।'

सामान्यार्घ्य-जल से फूलों का अभ्युक्षण करे। फिर कर-शोधन इस प्रकार करे---एक रक्त-पुष्प में चन्दन लगाकर उसे हथेली पर रखे। कामबीज (क्लीं) से उसे मींजकर वाग्भव (ऐं) बीज से सूंघे और---

ह्रौं ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः ।
मृत्यु-रोग-भय-क्लेशाः पतन्तु रिपु-मस्तके ॥

यह मन्त्र पढ़ते हुये नाराच-मुद्रा से ईशान कोण में उसे फेंक दे। इससे दोनों करों की शुद्धि, सूंघने से देवता-तृप्ति और फेंकने से उक्त विघ्नों का दूरीकरण होता है।

इसके बाद प्राणायाम-त्रय, ऋष्यादि, कर-षडङ्ग और व्यापक न्यास कर भूत-शुद्धि करके निम्न न्यास करे---

मातृका-न्यास

मातृका-न्यास दो प्रकार के हैं---अन्तर्मातृका और बहिर्मातृका। अन्तर्मातृका न्यास के लिए पहले विनियोग पढ़े---

ॐ अस्य मातृका-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृका सरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, सर्गः कीलकं, देव-भावाप्तये मातृका-न्यासे विनियोगः।

ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीमातृका-सरस्वती-देवतायै नमः हृदये। ॐ व्यञ्जनेभ्यो बीजेभ्यो नमः गुह्ये। ॐ स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः पादयोः। ॐ सर्गाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे। देव-भावाप्तये मातृका-न्यासे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे। यथा—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्त-मुख-दोः-पन्मध्य-वक्ष-स्थलां।
भास्वन्मौलि-निबद्ध-चन्द्र-शकलामापीन-तुङ्ग-स्तनीम्॥
मुद्रामक्ष-गुणं सुधाढ्य-कलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
बिभ्राणां विशद-प्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये॥

अर्थात् पचास मातृकाओं के अंशों से मुख, हाथ, पैर और बिचले भाग की बनी, चन्द्र की एक कला से शोभित, ऊपरी शिरो-भागवाली, कठोर ऊँचे स्तनवाली, मुद्रा (अभय व वर-मुद्रा), माला, सुधा-घट और विद्या को (चारों) हाथों में धारण करनेवाली, अत्यन्त प्रकाशवाली और त्रिनेत्रा सरस्वती (वाक्-शक्ति) का आश्रय लेते हैं।

अन्तर्मातृका-न्यास

धूम्राभ विशुद्ध-चक्र (कण्ठ) के सोलहों दलों में सोलहों स्वरों के आदि में 'ॐ' और अन्त में 'नमः' युक्त कर प्रत्येक दल में न्यास करे। यथा 'ॐ अं नमः, ॐ आं नमः' इत्यादि। मूंगे के सदृश लाल वर्ण के अनाहत-चक्र (हृदय) के बारहों दलों में 'क' से लेकर 'ठ' तक के बारहों व्यञ्जनों को उसी प्रकार एक-एक व्यञ्जन का एक-एक दल में न्यास करे। नील-जीमूत रंग के मणिपूर-चक्र (नाभि) के दशों दलों में 'ड' से 'फ' तक दशो अक्षरों का पूर्व-वत् न्यास करे। वियत् के सदृश वर्णवाले स्वाधिष्ठान-चक्र (लिंग-मूल) के छः दलों में 'ब' से 'ल' तक के छहों वर्णों का पूर्ववत् न्यास करे। सुवर्ण के सदृश लाल रंग के मूला-धार-चक्र के चारों दलों में 'व श ष स' इन चार वर्णों का पूर्ववत्

न्यास करे। चन्द्र के सदृश वर्णवाले आज्ञा (भ्रू-मध्य) चक्र के दोनों दलों में 'ह्' और 'क्ष' वर्णों का पूर्ववत् न्यास करे।

बहिर्मातृका-न्यास

बहिर्मातृका - न्यास के सृष्टि, स्थिति और संहार तीन क्रम हैं।[12]

(१) सृष्टि-मातृका-न्यास—मन-ही-मन फूलों से तत्व-मुद्रा वा निम्न मातृका-मुद्राओं से न्यास करे। यथा—

ॐ अं नमः—ललाट-अनामा, ॐ आं नमः—मुख-मण्डल मध्यमा; ॐ इं नमः, ॐ ईं नमः—दोनों नेत्र-तर्जनी-मध्यमा-अनामा-वृद्धा; ॐ उं नमः, ॐ ऊं नमः—दोनों कर्ण-अंगुष्ठ; ॐ ऋं नमः, ॐ ॠं नमः—दोनों नासापुट-कनिष्ठांगुष्ठ; ॐ लृं नमः, ॐ लॄं नमः—दोनों-गाल दोनों मध्यांगुलियां, ॐ एं नमः, ॐ ऐं नमः-दोनों होठ-मध्यमा। अनामा से ॐ ओं नमः, ॐ औं नमः—दोनों दन्त-पंक्तियां; ॐ अं नमः, ॐ अः नमः—जिह्वा और तालु-मूल (ब्रह्म-रन्ध्र), ॐ कं नमः—दक्षिण बाहु-मूल, ॐ खं नमः—कूर्पर (कुहनी), ॐ गं नमः—मणि-बन्ध (कलाई), ॐ घं नमः—अंगुलि-मूल, ॐ ङं नमः—अंगुल्यग्र - मध्यमा। इसी प्रकार मध्यमा से ॐ चं नमः, ॐ छं नमः, ॐ जं नमः, ॐ झं

---

[12]यामल के अनुसार यह न्यास गृहस्थों के हेतु स्थित्यन्त, ब्रह्मचारियों के हेतु सृष्टयन्त और यती तथा वानप्रस्थों के हेतु संहारान्त है। हाँ, जो गृहस्थ विरक्त हैं, वे संहार-क्रम से भी कर सकते हैं। जो वानप्रस्थी सपत्नीक हैं, स्थिति-क्रम से और जो विद्यार्थी, गृहस्थ वा वानप्रस्थी हैं वा यती हैं, वे सृष्टि-क्रम से कर सकते हैं।

नमः, ॐ ञं नमः—वाम-बाहु-मूल, कूर्पर, मणि-बन्ध, अंगुलि-मूल और अंगुल्यग्र में, ॐ टं नमः, ॐ ठं नमः, ॐ डं नमः, ॐ ढं नमः, ॐ णं नमः—दक्षिण पाद-मूल, जानु, गुल्फ और अंगुलियों के मूल और अग्र-भाग में, ॐ तं नमः, ॐ थं नमः, ॐ दं नमः, ॐ धं नमः, ॐ नं नमः—वाम-पाद-मूल, जानु, गुल्फ और अंगुलियों के अग्र-भाग में; दक्ष-पार्श्व में ॐ पं नमः, वाम-पार्श्व में ॐ फं नमः' । ॐ बं नमः—पृष्ठ में-मध्यमा अनामा और कनिष्ठा तीनों से, ॐ भं नमः—नाभि-तर्जनी छोड़ चारों अंगुलियों से, ॐ मं नमः—पेट-पांचों अंगुलियों से । हस्त-तल से ॐ यं नमः—हृदय, ॐ रं नमः—दक्ष-बाहु-मूल, ॐ लं नमः—ककुत्-स्थल, ॐ वं नमः—वाम बाहु-मूल, ॐ शं नमः—हृदय से लेकर दाहिने हाथ तक, ॐ षं नमः—हृदय से वाम कर-पर्यन्त, ॐ सं नमः—हृदय से दक्ष पाद-पर्यन्त, ॐ हं नमः—हृदय से वाम पाद-पर्यन्त, ॐ लं नमः—हृदय से नाभि-पर्यन्त, ॐ क्षं नमः—हृदय से मुख-पर्यन्त ।

(२) स्थिति-मातृका-न्यास—पूर्वोक्त ऋष्यादि-कराङ्ग-न्यास कर स्थिति-मातृका सरस्वती का इस प्रकार ध्यान करे—

सिन्दूर-कान्तिममिताभरणां त्रिनेत्रां ।
विद्याक्ष-सूत्र-मृग-पोत-वरं दधानां ॥
पार्श्व-स्थितां भगवतीमपि काञ्चनाङ्गीं ।
ध्यायेत् कराब्ज-धृत-पुस्तक-वर्ण-मालां ॥

अर्थात् सिन्दूर के सदृश लाल कांतिवाली, अतुल गहनों से भूषिता, तीन आँखवाली, विद्या, अक्ष-सूत्र, हरिण का बच्चा और वर धारण किये हुई, सोने के सदृश शरीर की कांतिवाली, हाथों में पुस्तक और वर्ण-माला को धारण किए हुई, बगल में रहने-

वाली भगवती का ध्यान करना चाहिये ।

डकार से न्यास आरम्भ कर क्षकार तक, फिर अकार से ले कर ठकार तक न्यास करें ।

(३) संहार-मातृका-न्यास—पूर्वोक्त ऋष्यादि-कराङ्ग-न्यास कर संहार-मातृका सरस्वती का इस प्रकार ध्यान करे—

अक्षस्रजं हरिण-पोतमुदग्र-टंकं ।
विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम् ॥
अर्द्धेन्दु-मौलिमरुणामरविन्द-वासां ।
वर्णेश्वरीं प्रणमत-स्तन-भार-नम्रां ॥

अर्थात् अक्ष-माला, हरिण का बच्चा, बहुत बड़ा टंक और विद्याओं को सदा अपने हाथों में धारण किये हुई, तीन आँख-वाली, अर्ध चन्द्रमा के मुकुटवाली, लाल रंगवाली, कमल पर वास करनेवाली और स्तनों के भार से नमी हुई सरस्वती को प्रणाम करे ।

क्षकार से न्यास प्रारम्भ करके अकार तक विलोम रीति से न्यास करने से संहार-मातृका-न्यास होता है ।[13]

---

[13]इन तीनों न्यासों में एक मत से विन्दु और विसर्ग के योग का भेद ऐसा है कि सृष्टि-न्यास विसर्ग-युक्त, स्थिति-न्यास विन्दु और विसर्ग दोनों से युक्त और संहार-न्यास केवल विन्दु-युक्त करना चाहिये । केवल मातृका से अर्थात् विन्दु और विसर्ग से रहित मातृका से करने से विद्या-लाभ होता है। सोभया मुक्ति-दायिनी है, सविसर्गा भोग-दात्री है और सविन्दु विन्दु देने-वाली है। अगर कोई साधक सृष्टि, स्थिति और संहार-क्रम

कला-मातृका न्यास

ॐ अस्य श्रीकला-मातृका-न्यासस्य प्रजापतिः ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीशारदा देवता। देव-भावाप्तये न्यासे विनियोगः।

प्रजापति-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीशारदा - देवतायै नमः हृदि। देव-भावाप्तये न्यासे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

अं ॐ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऋं ॐ ॠं अनामिकाभ्यां नमः। इँ ॐ ईं तर्जनीभ्यां नमः। लृं ॐ ॡं कनिष्ठाभ्यां नमः। उं ॐ ऊं मध्यमाभ्यां नमः॥ ॐ अंः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

इसी प्रकार षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे। यथा—

हस्तैः पद्मं रथाङ्गं गुणमथ हरिणं पुस्तकं वर्ण-मालां,
टंकं शुभ्रं कपालं दरममृत-लसद्धेम-कुम्भं वहन्तीम्।

तीनों से न्यास करना चाहे, तो कर सकता है परन्तु सृष्टि, स्थिति और संहार-क्रम से करने के बाद पुनः सृष्टि और स्थिति-क्रम से कर ले। अन्त में संहार-क्रम का न्यास न रहे, ऐसा करना उचित है। इस न्यास का पुरश्चरण भी किया जाता है।

यह मातृका-न्यास वैष्णव लोग केशवादि, शैव श्रीकण्ठादि और गाणपत्य गणेश-मातृका सहित करते हैं। शाक्तों को कला-मातृका और श्रीकण्ठादि मातृका न्यास-द्वय आवश्यक हैं, जो यहाँ दिए गए हैं।

मुक्ता-विद्युत्पयोद-स्फटिक-नव-जवा-बन्धुरैः पञ्च-वक्त्रैः,
त्र्यक्षैर्वक्षोज-नम्रां सकल-शशि-निभां शारदां तां नमामि।

ॐ अं निवृत्यै नमः। ॐ आं प्रतिष्ठायै नमः। ॐ इं विद्यायै नमः। ॐ ईं शान्त्यै नमः। ॐ उं इन्धिकायै नमः। ॐ ऊं दीपिकायै नमः। ॐ ऋं रेचिकायै नमः। ॐ ॠं मोचिकायै नमः। ॐ लृं परायै नमः। ॐ लॄं सूक्ष्मायै नमः। ॐ एं सूक्ष्मामृतायै नमः। ॐ ऐं ज्ञानामृतायै नमः। ॐ ओं आप्यायिन्यै नमः। ॐ औं व्यापिन्यै नमः। ॐ अं व्योम-रूपायै नमः। ॐ अः अनन्तायै नमः। ॐ कं सृष्ट्यै नमः। ॐ खं ऋद्ध्यै नमः। ॐ गं स्मृत्यै नमः। ॐ घं मेधायै नमः। ॐ ङं कान्त्यै नमः। ॐ चं लक्ष्म्यै नमः। ॐ छं द्युत्यै नमः। ॐ जं स्थिरायै नमः। ॐ झं स्थित्यै नमः। ॐ ञं सिद्ध्यै नमः। ॐ टं जरायै नमः। ॐ ठं पालिन्यै नमः। ॐ डं शान्त्यै नमः। ॐ ढं ऐश्वर्यै नमः। ॐ णं रत्यै नमः। ॐ तं कामिकायै नमः। ॐ थं वरदायै नमः। ॐ दं ह्लादिन्यै नमः। ॐ धं प्रीत्यै नमः। ॐ नं दीर्घायै नमः। ॐ पं तीक्ष्णायै नमः। ॐ फं रौद्र्यै नमः। ॐ बं भयायै नमः। ॐ भं निद्रायै नमः। ॐ मं तन्द्रायै नमः। ॐ यं क्षुधायै नमः। ॐ रं क्रोधिन्यै नमः।

ॐ लं क्रियायै नमः। ॐ वं उत्कार्यै नमः। ॐ शं मृत्यवे नमः। ॐ षं पीतायै नमः। ॐ सं श्वेतायै नमः। ॐ हं अरुणायै नमः। ॐ ळं असितायै नमः। ॐ क्षं अनन्तायै नमः।

श्रीकण्ठादि-मातृका-न्यास

ॐ अस्य श्रीकण्ठादि-मातृका-न्यासस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीअर्द्ध-नारीश्वरो देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयः। अव्यक्तयः कीलकानि। देव-भावाप्तये न्यासे विनियोगः।

दक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। अर्द्ध-नारीश्वर-देवतायै नमः हृदये। हलो बीजेभ्यो नमः गुह्ये। स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः पादयोः। अव्यक्तेभ्यः कीलकेभ्यो नमः सर्वाङ्गे। देव-भावाप्तये न्यासे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

अं कं खं गं घं ङं आं ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
इं चं छं जं झं ञं ईं ह्सीं तर्जनीभ्यां नमः।
उं टं ठं डं ढं णं ऊँ ह्सूँ मध्यमाभ्यां नमः।
एं तं थं दं धं नं ऐं ह्सैं अनामिकाभ्यां नमः।
ओं पं फं बं भं मं औं ह्सौं कनिष्ठाभ्यां नमः।
अं यं रं लं वं अः ह्सः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

इसी प्रकार हृदयादि छहों अंगों में न्यास कर ध्यान करे—

बन्धूक-काञ्चन-निभं रुचिराक्ष-मालां,
पाशांकुशौ च वरदं निज-बाहु-दण्डैः ।

बिभ्राणमिन्दु-शकलाभरणं त्रिनेत्र—
मर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामः ॥

अब निम्न मन्त्रों से श्रीकण्ठादि-न्यास करे । प्रत्येक मन्त्र के आदि में 'ह्सौः' और अन्त में 'नमः' जोड़ ले । यथा—

ह्सौः अं श्रीकण्ठेश-पूर्णोदरीभ्यां नमः । आं श्री अनन्तेश-विरजाभ्यां । इं सूक्ष्मेश - शाल्मलीभ्यां । ईं त्रिमूर्तीश-लोलाक्षीभ्यां । उं अमरेश-वर्तुलाक्षीभ्यां । ऊं अर्घीश-दीर्घघोणाभ्यां । ऋं भारभूतीश-दीर्घमुखी-भ्यां । ॠं अतिथीश-गोमुखीभ्यां । लृं स्थाण्वीश-दीर्घ-जिह्वाभ्यां । लॄं हरेश-कुण्डोदरीभ्यां । एं झिण्टीश-ऊर्ध्वकेशीभ्यां । ऐं भौतिकेश - विकृतमुखीभ्यां । ओं सद्योजातेश-ज्वालामुखीभ्यां । औं अनुग्रहेश-उल्कामुखी-भ्यां । अं अक्रूरेश-श्रीमुखीभ्यां । अः महासेनेश-विद्या-मुखीभ्यां । कं क्रोधीश-महाकालीभ्यां । खं चण्डेश-सरस्वतीभ्यां । गं पञ्चान्तकेश-गौरीभ्यां । घं शिवेश-त्रैलोक्यविद्याभ्यां । ङं एकरुद्रेश-मन्त्रशक्तिभ्यां । चं कूर्मेश-अष्टशक्तिभ्यां । छं एकनेत्रेश-भूतमातृभ्यां । जं

चतुराननेश-लम्बोदरीभ्यां । झं अजेश-द्राविणीभ्यां । ञं सर्वेश-नागरीभ्यां । टं सोमेश-खेचरीभ्यां । ठं लाङ्गलीश-मञ्जरीभ्यां । डं दारुकेश-कपिलीभ्यां । ढं अर्धनारीश-वीरिणीभ्यां । णं उमाकान्तेश-काकोदरीभ्यां । तं आषाढीश-पूतनाभ्यां । थं दण्डीश-२ कालीभ्यां । दं अत्रीश-योगिनीभ्यां । धं मीनेश - शङ्खिनीभ्यां । नं मेषेश-तर्जनीभ्यां । पं लोहितेश - कालरात्रिभ्यां । फं शिखीश-कुब्जिकाभ्यां । बं छगलण्ड-कपर्दिनीभ्यां । भं द्विरण्डेश-वज्रिणीभ्यां । मं महाकालेश-जयाभ्यां । यं वाणीश-सुमुखीश्वरीभ्यां । रं भुजङ्गेश-रेवतीभ्यां । लं पिनाकीश-माधवीभ्यां । वं खड्गीश-वारुणीभ्यां । शं बकेश-वायवीभ्यां । षं श्वेतेश-रक्षोविद्यारिणीभ्यां । सं भृग्वीश-सहजाभ्यां । हं नकुलीश-लक्ष्मीभ्यां । ळं शिवेश-व्यापिनीभ्यां । क्षं सम्वर्तकेश-महामायाभ्यां ।

वर्ण-न्यास

निम्न न्यास तत्वमुद्रा से यथोक्त स्थानों में करे—

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं नमः—हृदय

ॐ एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमः—दक्ष भुजा

ॐ ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमः—वाम भुजा

ॐ णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमः—दक्ष जंघा

ॐ मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं नमः—वाम जंघा

(०८)

षोढा-न्यास[1]

१ ॐ से पुटित मातृका और मातृका-पुटित प्रणव मातृका
२ लक्ष्मी-बीज-पुटित मातृका और मातृका-पुटित लक्ष्मी-बीज
३ काम-बीज-पुटित मातृका और मातृका-पुटित काम-बीज
४ माया-बीज-पुटित मातृका और मातृका-पुटित माया-बीज
५ काली-बीज-द्वय (क्रीं क्रीं) पुटित 'ॠं ॠं लृं लॄं और 'ॠं ॠं लृं लॄं'' पुटित काली-बीज-द्वय।

६ मूल-पुटित मातृका और मातृका-पुटित मूल-बीज (क्रीं)। इनसे अनुलोम और विलोम-क्रम से तत्व-मुद्रा से मातृका-न्यास के सब स्थानों में न्यास कर चुकने पर मूल से एक सौ आठ बार व्यापक न्यास करे। फिर तत्व न्यास करे। यथा—

---

[1] श्रुति के अनुसार षोढा अर्थात् छः प्रकार के न्यास से षट्-कालीत्व-पद प्राप्त हो सकता है। षट्-काली ये हैं—१ परा, २ परात्परा, ३ परात्परातीता, ४ चित्परा, ५ चित्परात्परा, ६ चित्परात्परातीता। इन्हीं के योग को षोढा कहते हैं। श्रौत षोढा के ये नाम हैं—

१—वैष्णव कला-युक्ता मातृका से न्यास का फल—भूमि-तत्व-जय।

२—कामकला-पुटिता श्रीकला और श्रीकला-पुटिता काम-कला से न्यास का फल—जल-तत्व-जय।

३—आदिकला-पुटिता श्रीकला और श्रीकला-पुटिता आदि-कला से न्यास का फल—अग्नि-तत्व-जय।

४—विद्याराज्ञी (द्वाविंशाक्षरी) पुटित कूर्च-चन्द्र (ऐं) और कूर्च-चन्द्र-पुटिता विद्या-राज्ञी से न्यास का फल—वायु-तत्व जय।

तत्व-न्यास

मूल-मन्त्र यदि 'क्रीं' हो, तो इसके तीन खण्ड करे—क, र, ई। यदि विद्या-राज्ञी हो, तो आदि के सात बीजों का प्रथम खण्ड (क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं), मध्य खण्ड छः अक्षरों (दक्षिणे कालिके) का और तृतीय खण्ड नौ (क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा) वर्णों का करे। इन खण्डों से क्रमशः शिर से नाभि, नाभि से हृदय और हृदय से शिर-पर्य्यन्त न्यास करे।

बीज-न्यास

क्रीं नमः ब्रह्म-रंध्र में। क्रीं नमः भ्रू-युगल में। क्रीं नमः

५—अनुलोम-विलोम मूलमन्त्र केवल से न्यास का फल—आकाश-तत्व-जय।

६—मूलमन्त्र से १०८ बार व्यापक-न्यास का फल—देवता-रूपत्व।

इस षोढा-न्यास के, जिसके गुप्त-षोढा और हंस-षोढा दो और प्रधान भेद हैं, फल का वर्णन हो ही नहीं सकता। इतना ही कहना पर्याप्त है कि इसका करनेवाला काली-स्वरूप हो जाता है, उसके दर्शन से देवत्त्व का लाभ होता है और वह तीनों लोकों को जय कर लेता है। षोढा-न्यास सिद्ध होने पर साधक देव-मूर्ति, गुरु अथवा किसी को नमस्कार नहीं करता, कारण मूर्ति फट जाती है और जीव के सिर फट जाते हैं। सिद्धि की जाँच यह है कि घट को नमस्कार करे। अगर घट फूट जाय तो समझे कि षोढा-न्यास सिद्ध हो गया। षोढा-न्यास दसों महा-विद्याओं के पृथक्-पृथक् हैं। साधारणतया वीर-तन्त्रोक्त ही प्रचलित है।

ललाट में । हूँ नमः नाभि में । हूँ नमः गुह्य में । ह्रीं नमः मुख में । ह्रीं नमः सर्वाङ्ग में ।

विद्या-न्यास

सिर—क्रीं नमः, मूलाधार—क्रीं नमः, हृदय—क्रीं नमः, तीनों नेत्र—क्रीं नमः, दोनों कान—क्रीं नमः, मुख—क्रीं नमः, दोनों भुजा—क्रीं नमः, पीठ—क्रीं नमः, दोनों जानु—क्रीं नमः, नाभि—क्रीं नमः ।

लघु-षोढा-न्यास

मस्तक—ॐ नमः, मूलाधार—स्त्रीं नमः, लिंग—ऐं नमः, नाभि—क्रीं नमः, हृदय—ऐं नमः, कण्ठ—क्रीं नमः, भ्रू-मध्य-ह्सौः नमः, दाहिनी बाहु—ॐ नमः, वाम-बाहु—श्रीं नमः, दक्ष-पाद—ह्रीं नमः, वाम-पाद—क्रीं नमः, पीठ—क्रीं नमः ।

पीठ-न्यास

हृदय में तत्व-मुद्रा से—ॐ ह्रीं आधार-शक्तये नमः, पं प्रकृत्यै नमः, कं कूर्माय नमः, शं शेषाय नमः, लं पृथिव्यै नमः, ॐ सुधाम्बुधये नमः, ॐ मणि-द्वीपाय नमः, ॐ चिन्तामणि-गृहाय नमः, ॐ श्मशानाय नमः, ॐ पारिजाताय नमः, ॐ रत्न-वेदिकायै नमः, ॐ नाना-मुनिभ्यो नमः, ॐ नाना-देवेभ्यो नमः, ॐ बहु-मांसास्थि-मोदमान-शिवाभ्यो नमः, ॐ शव-मुण्डेभ्यो नमः ।

ॐ धर्माय नमः—दायाँ कंधा, ॐ ज्ञानाय नमः—बायाँ कंधा, ॐ वैराग्याय नमः—दाहिनी कमर, ॐ ऐश्वर्याय नमः—बाईं कमर, ॐ अधर्माय नमः—मुख, ॐ अज्ञानाय नमः—बायाँ भाग, ॐ अवैराग्याय नमः—नाभि, ॐ अनैश्वर्याय नमः—दाहिना भाग ।

इसके बाद षोडश-दल के कमल की कर्णिका में—ॐ आनन्द-कन्दाय नमः । ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ अर्क-

मण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः। ॐ सोम-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः। ॐ मं वह्नि-मण्डलाय दश-कलात्मने नमः। ॐ सं सत्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ अं अन्तरात्मने नमः। ॐ पं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

इसके बाद अष्ट-दलों पर पूर्व से—इं इच्छा-शक्त्यै नमः, ज्ञां ज्ञान-शक्त्यै नमः, कं क्रिया-शक्त्यै नमः, कां कामिन्यै नमः, कां कामदायै नमः, रं रत्यै नमः, रं रति-प्रियायै नमः, आं आनन्दायै नमः। कर्णिका पर—मं मनोन्मन्यै नमः। उसके बाद 'ऐं परायै नमः। ह्सौः अपरायै नमः। सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासनाय नमः।'

इसप्रकार भूतशुद्धि और न्यासादि कर देह को निष्पाप समझ पीठ-न्यास से देह को देवता के रहने के स्थान (पीठ) की भावना कर निम्नलिखित प्रक्रिया से अपने शरीरस्थ श्रीचक्र में देवता की प्राण-प्रतिष्ठा करे। अर्थात् अपने को देवता-स्वरूप समझे। यथा—

प्राण-प्रतिष्ठा

ॐ अस्य प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरा ऋषयः, ऋग्-यजुः-सामानि छन्दांसि, चैतन्य-रूपा प्राण-शक्तिः देवता, प्राण-प्रतिष्ठायां विनियोगः।

ॐ ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरेभ्यो नमः—शिरसि। ॐ ऋग्यजुः-सामेभ्यश्छन्दोभ्यो नमः—मुखे। ॐ चैतन्य-रूपायै प्राण-शक्त्यै देवतायै नमः—हृदये।

अं कं खं गं घं ङं आं आकाश-वायु-वह्नि-सलिल-पृथिव्यात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं शब्द-स्पर्श-रूप-रस-

गन्धात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा। ङं टं ठं डं ढं णं ऊं श्रोत्र-त्वक्-चक्षु-जिह्वा-घ्राणात्मने मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं वाक्-पाणिपाद-पायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यां हुं। ओं पं फं बं भं मं औं वचनादान-गति-विसर्गानन्दात्मने कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः मनो-बुद्ध्यहंकार-चिदात्मने करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार हृदयादि षडङ्गों का न्यास कर ध्यान करे। यथा—प्राण-शक्ति का ध्यान

ॐ रक्ताब्धि-पीतारुण-पद्म-संस्थां।
पाशांकुशाविक्षु-शरास-बाणान्॥
शूलं कपालं दधतीं कराब्जैः।
रक्तां त्रिनेत्रां प्रणमामि देवीम्॥

अर्थात् शोणित (लहू) के समुद्र में नाव पर लाल कमल पर रहनेवाली, पाश, अंकुश, खड्ग, धनुष, वाण, त्रिशूल और कपाल (खप्पर)को हाथों में धारण करनेवाली, लाल रंग और तीन आँखोंवाली देवी को प्रणाम करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान कर प्राण-शक्ति देवी की मानस-पूजा कर निम्न 'प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्रों' से लेलिहानी मुद्रा से अर्थात् दाहिने हाथ की बिचली तीन अँगुलियों को सटाकर अँगूठे को अना-मिका के मूल में लगा और कनिष्ठा को पृथक् कर हृदय पर रख अनाहत-चक्र की कर्णिका में अष्ट-दल-कमल पर देवता का ध्यान करते हुये अपने प्राणों में इष्ट-देवता की प्रतिष्ठा करे—

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः श्रीदक्षिण-कालिका-देवतायाः प्राणाः इह प्राणाः। आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं

हंसः श्रीदक्षिण-कालिका-देवतायाः जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः श्रीदक्षिण-कालिका-देवतायाः इह सर्वेन्द्रियाणि। आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः श्रीदक्षिण-कालिका-देवतायाः वाङ्-मनस्त्वक्-चक्षु-श्रोत्र-जिह्वा-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

इस प्रकार देह में रहनेवाली आत्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा-रूपिणी इष्ट-देवता के ऐक्य की भावना कर साधक अपने को कामकला-स्वरूप समझ अपनी योग्यता के अनुसार परा-पूजन के आधार पर पञ्चोपचार वा षोडशोपचार मानस-पूजन करे। यथा—

१ गन्ध—विद्या-भाव (यथार्थ और अयथार्थ ज्ञान) का समर्पण। २ पुष्प—अहिंसा, इन्द्रिय-निग्रह, दया, क्षमा और ज्ञान (विषय-ज्ञान) रूप पञ्च यथार्थ पुष्पों का समर्पण। ३ धूप—कीर्ति अर्थात् कीर्ति की इच्छा का समर्पण। ४ दीप—ज्योति अर्थात् आत्म-प्रकाश का समर्पण। ५ नैवेद्य—रस अर्थात् शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत रसों की क्या कथा, शांत रस का भी समर्पण।

अन्त में माया का अभाव, अहंकार-शून्यता, अराग, मद का नाश, अमोह, अदम्भ, द्वेष की शून्यता, क्षोभ का अभाव, मात्सर्य-शून्यता और निर्लोभ—इन भाव-रूपी पुष्पों की पुष्पाञ्जलि दे कर पूर्ण रूप से आत्म-समर्पण करे।

मानस-तर्पण

वह्नि-मण्डल के मूलाधार और स्वाधिष्ठान चक्र-द्वय के आधार पर सूर्य-मण्डल के मणिपूर और अनाहत चक्र-द्वय रूपी पात्र में सोम-मण्डल के विशुद्ध और आज्ञा-चक्र-द्वय रूपी परा-

मृत से, जो अमा-कला से स्वशक्ति पर-शिव के संयोग से उत्पन्न हुआ है, पर-देवता की तृप्ति होती है। कारण तर्पण का अर्थ तृप्ति कराना है। इसकी प्रयोग-विधि यह है कि प्राणायाम कर अर्थात् श्वास को ऊपर खींचकर उसे रोक अपने को अपनी इष्ट पर-देवता में पूर्णभाव से समर्पण करना चाहिए। तब इस मानसिक प्रक्रिया के फल-स्वरूप जो एक विशिष्ट आनन्द होगा, उस भाव को भी देवता में समर्पण कर उसकी तृप्ति करनी चाहिये। इसी प्रकार कम-से-कम तीन बार करे।

मानस-हवन

अपने परमात्म-ज्ञान के आधार पर अन्तरात्म-स्वरूप में चिद्रूपी कुण्ड में, जिसकी आनन्द-रूपी मेखला और नाद-बिन्दु-रूपी योनि है, यथार्थ-ज्ञान-रूपी अग्नि में स्वाधिष्ठान वा मणि-पूर-चक्र में, जैसा गुरु-क्रम हो, बहिर्मुखी वृत्तियों अर्थात् बहिरिन्द्रियों-द्वारा बोधित विषयों की मन-रूपी स्रुवा-द्वारा प्रथम आहुति दे। दूसरी आहुति सुकृत और दुष्कृत (धर्म और पाप) की दे। तीसरी आहुति—

'न मैं करनेवाला हूँ और न मुझे कर्म-फलों को भोगना है क्योंकि मैं वही हूँ'

इस आशय से कर्म-फल की आहुति दे। इस हवन से इन्दता, अहन्ता और पराहन्ता—भाव-त्रय का लय होता है, जिससे निर्विकल्प समाधि होती है अर्थात् साधक साक्षात् ब्रह्म-मय होता है।
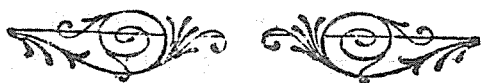
(२)

पात्रों का स्थापन

घट-स्थापन

अपने वाम भाग में सोने, चाँदी, काँसे, ताँबे, कांच या मिट्टी का, न बड़ा न छोटा, सुन्दर और दृढ़ घट स्थापित करे। पहले रक्त-चन्दन से बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त और चतुरस्र वाला एक मण्डल लिखे वा तांबे का बनवा रखे। इसका सामान्यार्घ्य जल से अभ्युक्षण कर 'ह्रीं आधार-शक्त्यादिभ्यो नमः' से जल व गन्ध-पुष्पाक्षत से मण्डल पर पूजा करे। आधार को धो सामान्यार्घ्य जल से अभ्युक्षण कर मण्डल पर स्थापित करे। आधार पर वह्नि की दश कलाओं की निम्न मन्त्र से प्राण-प्रतिष्ठा करे—

आंह्रींक्रों यं……हं हंसः वह्नि-दश-कलानां प्राणा इह प्राणा। आं ह्रीं क्रों…वह्नि-दश-कलानां जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों …वह्नि-दश-कलानां सर्वेन्द्रियाणि। आं ह्रीं क्रों…वह्नि-दश-कलानां वाङ्मनश्चक्षुस्त्वक्-जिह्वा-श्रोत्र-घ्राण-प्राणाः इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

प्राण-प्रतिष्ठा कर दश कलाओं की गन्धाक्षत से पूजा करे। यथा—यं धूम्रार्चिषे नमः, रं उष्णायै नमः, लं ज्वलिन्यै नमः, वं ज्वालिन्यै नमः, शं विस्फुलिंग्यै नमः, षं सुश्रियै नमः, सं स्वरूपायै नमः, हं कपिलायै नमः, लं हव्यवहायै नमः, क्षं कव्यवहायै नमः, मं रं वह्नि-मण्डलाय दश-कलात्मने नमः'। तब 'अस्त्राय

फट्' से घट को धोकर उसे रक्त सिन्दूर, रक्त फूल वा पुष्प-माला से अलंकृत कर 'ॐ देवी-रूप-कलशाय नमः' से गन्ध, पुष्प और अक्षत से पूजन कर 'ॐ देवतात्मक-कलशं स्थापयामि नमः,' कह कर आधार पर घट स्थापित करे। सामान्यार्घ्य जल से मूलमन्त्र से अभ्युक्षण कर सूर्य्य की बारह कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा पूर्व-वत् करे। यथा—आं ह्रीं क्रों यं ...हं हंसः तपिन्यादीनां सूर्य-द्वादश कलानां प्राणा इह प्राणाः इत्यादि। तब इनकी पृथक्-पृथक् पूजा करे। यथा—

ॐ कं भं तपिन्यै नमः, खं बं तापिन्यै नमः, गं फं धूम्रायै नमः घं पं मरीच्यै नमः, ङं नं ज्वालिन्यै नमः, चं तं रुच्यै नमः, छं दं सुषुम्नायै नमः, जं थं भोगदायै नमः, झं तं विश्वायै नमः, ञं णं बोधिन्यै नमः, टं ठं धारिण्यै नमः, ठं डं क्षमायै नमः। फिर 'ॐ अं अर्क-मण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः' से पूजन करे। मूल-मन्त्र आदि में देकर विलोम मातृका पढ़ते हुये कारण से घट को पूर्ण करे। कारण में चन्द्रमा की षोडश कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा करे। यथा—

आं ह्रीं क्रों यं......हं हंसः अमृतादीनां चन्द्र-षोडश-कलानां प्राणा इह प्राणाः इत्यादि। फिर इन सोलहों की पृथक्-पृथक् पूजा करे। यथा—

अं अमृतायै नमः, आं मानदायै नमः, इं पूषायै नमः, ईं तुष्ट्यै नमः, उं पुष्ट्यै नमः, ऊं रत्यै नमः, ऋं धृत्यै नमः, ॠं शशिन्यै नमः, लृं चन्द्रिकायै नमः, ॡं कान्त्यै नमः, एं ज्योत्स्नायै नमः, ऐं श्रियै नमः, ओं प्रीत्यै नमः, औं अंगदायै नमः, अं पूर्णायै नमः, अः पूर्णामृतायै नमः। फिर 'उं चं चन्द्र-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः' से पूजा करे। तब द्रव्य में त्रिकोण, षट्-कोण,

वृत्त, चतुरस्र मण्डल की भावनाकर चतुरस्र की दक्षिण-रेखा पर 'ॐ उड्डोयान-पीठाय नमः,' पश्चिम-रेखा पर 'ॐ जालन्धर-पीठाय नमः,' उत्तर पर 'ॐ पूर्णगिरि-पीठाय नमः', पूर्व पर 'ॐ कामरूप-पीठाय नमः' कह गन्धाक्षत से पूजन कर षट्-कोणों पर उसी क्रम से हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र-त्रय और अस्त्र-इन षडङ्ग-देवताओं की पूजा करे। यथा—

ॐ क्रां हृदयाय नमः हृदय-देवतायै नमः, ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा शिरो-देवताय नमः, ॐ क्रूं शिखायै वषट् शिखा-देवतायै नमः, ॐ क्रैं कवचाय हुं कवच-देवतायै नमः, ॐ क्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट् नेत्र-त्रय-देवतायै नमः, ॐ क्रः अस्त्राय फट् अस्त्र-देवतायै नमः। तब त्रिकोण की तीनों भुजाओं पर 'अ' आदि सोलह स्वरों, ककारादि सोलह वर्णों और थकारादि सकारान्त सोलह वर्णों के आदि में प्रणव और अन्त में 'नमः' देकर पूजन करे। तीनों कोणों में 'ॐ हं नमः, ॐ लं नमः' और 'ॐ क्षं नमः' से पूजन करे। 'यं' बीज के दस बार जप से दोषों का भस्मीकरण, 'वं' बीज के दस बार जप से द्रव्य के दोषों का संशोषण, 'रं' बीज के दस बार जप से दोषों का भस्मीकरण, 'वं' बीज के दस बार जप से द्रव्य का अमृतीकरण कर 'हूँ' के उच्चारण से अवगुण्ठन, 'फट्' से रक्षण, मूल-मन्त्र से अभिवीक्षण कर मत्स्य-मुद्रा से आच्छादन करे। 'ॐ नमः' से गन्ध, पुष्प और अक्षत देकर अंकुश-मुद्रा से पूर्व-कथित मन्त्रों से तीर्थों का आवाहन कर प्रणव की ५१ कलाओं की पूजा करे। यथा—

प्रणव-पञ्चावयव भव-कला पूजन—

अकार - भव - सृष्ट्यादि-दश कला इहागच्छत इह तिष्ठत' से आवाहन कर 'ॐ हंसः शुचिषद् - वसुरन्तरिक्ष - सद्धोता

वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् नृषद् वर सदृत सद् - व्योम सदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत्' पढ़कर 'आं ह्रीं क्रों यं....हं हंसः प्रणवाकार-भव-सृष्ट-वादि-दश - कलानां प्राणा इह प्राणाः' इत्यादि से प्राण - प्रतिष्ठा करे। अब निम्न मन्त्रों से पूजा करे—ॐ कं सृष्ट्यै नमः, खं ऋद्धयै नमः, गं स्मृत्यै नमः, घं मेधायै नमः, ङं कान्त्यै नमः, चं लक्ष्म्यै नमः, छं द्युत्यै नमः, जं स्थिरायै नमः, झं स्थित्यै नमः, ञं सिद्धयै नमः। इसी प्रकार उकार - भव-जरादि-दश कला का आवाहन कर 'ॐ प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गरिष्ठः यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वाः' पढ़कर जरादि दश कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा कर पूर्वोक्त विधि से पूजन करे। यथा—

ॐ टं जरायै नमः, ठं पालिन्यै नमः, डं शान्त्यै नमः, ढं ऐश्वर्य्यै नमः, णं रत्यै नमः, तं कामिकायै नमः, थं वरदायै नमः, दं ह्लादिन्यै नम, धं प्रीत्यैः नमः, नं दीर्घायै नमः। पूर्ववत् मकार-भव-तीक्ष्णादि दश कलाओं का आवाहन कर 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टि-वर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्' पढ़कर उक्त प्राण-प्रतिष्ठा - मन्त्र से तीक्ष्णादि दश-कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा कर दसों का पूजन करे। यथा—

ॐ पं तीक्ष्णायै नमः, फं रौद्रयै नमः, बं भयायै नमः, भं निद्रायै नमः, मं तन्द्रायं नमः, यं क्षुधायै नमः, रं क्रोधिन्यै नमः, लं क्रियायै नमः, वं उल्काय्यै नमः, शं मृत्यवे नमः। इसी प्रकार प्रणव-विन्दु-भव-पीतादि पञ्च-कलाओं का आवाहन कर ब्रह्म-गायत्री पढ़ प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र से प्राण-प्रतिष्ठा कर पूजन करे। यथा—

ॐ षं 'पीतायै नमः, सं श्वेतायै नमः, हं अरुणायै नमः, लं असितायै नमः, क्षं अनन्तायै नमः। नादजा वृत्यादि षोडश कलाओं का आवाहन कर 'ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंषतु, आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते। गर्भं धेहि सिनिवाले गर्भं धेहि सरस्वति गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्कर-स्रजौ' पढ़कर पूर्ववत् प्राण-प्रतिष्ठा कर पूजन करे—ॐ अं निवृत्यै नमः, आं प्रतिष्ठायै नमः, इं विद्यायै नमः, ईं शान्त्यै नमः, उं इन्धिकायै नमः, ऊं दीपिकायै नमः, ऋं रेचिकायै नमः, ॠं मोचिकायै नमः, लृं परायै नमः, लॄं सूक्ष्मामृतायै नमः, एं ज्ञानामृतायै नमः, ओं आप्यायिन्यै नमः, औं व्यापिन्यै नमः, अं व्योमरूपायै नमः, अं अनन्तायै नमः। निवृत्यादि पाँच कलाओं का पूर्ववत् आवाहन और प्राण-प्रतिष्ठा करके पूजन करे—ॐ निवृत्यै नमः, ॐ प्रतिष्ठायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः, ॐ शान्त्यतीतायै नमः।

श्री आनन्दभैरव-भैरवी का पूजन—इसके बाद घटस्थ द्रव्य में श्री आनन्दभैरव का ध्यान करे। यथा—

सूर्य्य-कोटि-प्रतीकाशं चन्द्र-कोटि - सुशीतलं।
अष्टादश-भुजं देवं पञ्च-वक्त्रं त्रिलोचनम्॥
अमृतार्णव-मध्यस्थं ब्रह्म-पद्मोपरि-स्थितम्।
वृषारूढं नील-कण्ठं सर्वाभरण-भूषितम्॥
कपाल-खट्वाङ्ग-धरं घण्टा-डमरु-वादिनम्।
पाशांकुश-धरं देवं गदा-मूशल-धारिणम्॥
खड्ग-खेटक-पट्टीशं मुद्गरं शूल-दण्डकम्॥

विचित्र-खेटकं मुण्डं वरदाभय-पाणिकम् ॥
लोहितं देव-देवेशं भावयेत् साधकोत्तमः ।

अर्थात् अमृत-समुद्र के बीच में रहनेवाले; ब्रह्म-बोधक कमल के ऊपर स्थित; अठारह भुजा, पाँच मुख और तीन नेत्रवाले; बैल पर बैठे; नील - कण्ठ, सर्व - भूषणों से भूषित; खप्पर, खट्वांग धारण करनेवाले; घंटा और डमरु बजानेवाले; करोड़ों सूर्यों की सी कांतिवाले; करोड़ों चन्द्रमा जैसे शीतल; पाश, अंकुश, गदा और मूसल को धारण करनेवाले; खड्ग, खेटक, पट्टीश, मुद्गर, शूल, दण्ड, विचित्र खेटक, मुण्ड, वर और अभय को हाथों में रखनेवाले; लाल वर्णवाले; सब देवों के ईश्वर का साधक ध्यान करे ।

इस प्रकार ध्यान कर 'हसक्षमलवरयूं आनन्द-भैरवाय वषट् श्रीमदानन्द-भैरवं पूजयामि नमः' मन्त्र से तीन बार गंध-पुष्पाक्षत से उनका पूजनकर श्री आनन्द-भैरवी का ध्यान करे । यथा—

भावयेत्तु सुरा-देवीं चन्द्र-कोटि-सम-प्रभाम् ।
हिम-कुन्देन्दु-धवलां पञ्च-वक्त्रां त्रिलोचनाम् ॥
अष्टादश-भुजैर्युक्तां सर्वानन्द-करोद्यताम् ।
प्रहसन्तीं विशालाक्षीं देव-देवस्य सम्मुखीम् ॥

अर्थात् करोड़ों चन्द्रमा जैसी प्रभावाली; हिम, कुन्द और चन्द्रमा जैसी श्वेत वर्णवाली; पाँच मुख और तीन नेत्रवाली; अठारह बाँहों से युक्त; सर्व आनन्द-प्रदान में उद्यत; भैरव के सामने रहनेवाली; विशाल नेत्रोंवाली; हँसती हुई सुरा देवी का ध्यान करे ।

इस प्रकार ध्यान कर 'सहक्षमलवरयीं आनन्द-भैरव्यै वौषट् श्रीमदानन्द-भैरवीं पूजयामि नमः' मन्त्र से गन्ध-पुष्पाक्षत से उनका तीन बार पूजन करे।

इस प्रकार घट-स्थापन कर श्री-पात्र स्थापित करे।

श्री-पात्र (विशेषार्घ्य) स्थापन

देवता-प्रतीक मूर्त्ति, यन्त्र, कुण्डली, लिंग या घट इत्यादि और अपने मध्य में हूँ-गर्भ त्रिकोण, षट्-कोण, वृत्त और चतुरस्र मण्डल रक्त-चन्दन से लिख, चारों रेखाओं पर चारों पीठों का पूजन कर, षट्कोणों पर षडङ्ग-देवता का पूजन कर त्रिकोणों में मूल-मन्त्र के तीन खण्डों सहित आत्म-तत्व, विद्या-तत्व और शिव-तत्व का पूजन करे। मध्य में (बीज पर) 'हूं आधार-शक्त्यादिभ्यो नमः' से पूजन कर, 'फट्' से आधार को धो, मण्डल पर उसे रख, अग्नि की दस कलाओं की पूर्वोक्त विधि से प्राण-प्रतिष्ठा कर, एकत्र पूजन कर, कपालादि पात्र को 'फट्' से सामान्यार्घ्य-जल से धोकर 'ॐ क्रीं श्रीदक्षिण-कालिका-पात्रं स्थापयामि नमः' से आधार पर पात्र को 'श्रीदक्षिण-कालिका-पात्राय नमः' से पात्र का पूजन कर स्थापित करे। फिर पूर्वोक्त प्रकार से सूर्य की द्वादश कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा व पूजन कर 'ह्रीं' बीज वा विलोम मातृका-वर्णों से (जैसा गुरु-क्रम हो) श्रीपात्र का तीन भाग संशोधित तीर्थ से और शेष भाग शुद्ध जल से भरे। इस द्रव्य में सोम की षोडश कलाओं की प्राण-प्रतिष्ठा और पूजन कर इसमें रक्तचन्दन, रक्तपुष्प, बिल्व-पत्र, दूर्वा, अक्षत, कर्पूर और यदि हो सके तो स्वयम्भू पुष्प भी छोड़े। तब 'ह ल क्ष' मण्डित और 'ह्सौं' बीज-गर्भ अकथादि

त्रिकोण की भावना द्रव्य में कर इस मण्डल की पूजा कर 'हूं' से अवगुण्ठन-मुद्रा से अवगुण्ठन कर 'फट्' से रक्षण कर 'क्रों' से अंकुश-मुद्रा से चन्द्र-मण्डल से सोम-तीर्थ का आवाहन कर शोधित द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ कुल-तत्वों को द्रव्य में छोड़ श्री-पात्र को छूकर निम्न मन्त्रों को अर्थ-ज्ञान-सहित पढ़े—

ॐ ब्रह्माण्ड-रस-सम्भूतमशेष-रस-सम्भवम् ।
आपूरित महा-पात्रं पीयूष-रसमावह ॥ १ ॥
ॐ अखण्डैक-रसानन्द-करे पर-सुधात्मनि !
स्वच्छन्द-स्फुरणार्थाय निधेहि कुल-रूपिणि ॥२॥
ॐ अकुलस्थामृताकारे शुद्ध-ज्ञान-कले परे !
अमृतत्वं निधेह्यस्मिन् वस्तुनि क्लिन्न-रूपिणि ॥३॥
ॐ तद्-रूपेणैक-करणं कृत्वा ह्येतत्-स्वरूपिणि !
भूत्वा कुलामृताकारं मयि चित्-स्फुरणं कुरु ॥४॥
ॐ अहन्ता पात्र-भरितमिदन्ता, परमामृतम् ।
पराहन्ता-मये वह्नौ होम-स्वीकार-लक्षणम् ॥५॥

अब 'ऐं ब्लूं प्लूं ग्लूं स्लूं न्लूं अमृते अमृतोद्भवे अमृतेश्वरि, अमृत-वर्षिणि महत्प्रकाश-स्वरूपे अमृतं स्रावय स्रावय स्वाहा'— इस मन्त्र का तीन बार जप कर अमृतीकरण करे। इसके बाद— 'ऐं वद वद वाग्वादिनि ऐं; क्लीं क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय क्लेदय महा-क्षोभं कुरु कुरु क्लीं; सौः महा-मोक्षं कुरु कुरु ह्सौः स्हौः।' इस दीपिनी मन्त्र से पात्र को दीप्त करे। पात्र में पञ्च-रत्नों की पूजा करे—'ग्लूं गगन-रत्नेभ्यो नमः; ख्लूं खग-रत्नेभ्यो नमः'

प्लूं पाताल-रत्नेभ्यो नमः, म्लूं मर्त्य-रत्नेभ्यो नमः, व्लूं नाग-रत्नेभ्यो नमः।' तब पूर्वोक्त रीति से आनन्द-भैरव का ध्यान-सहित पूजन कर इष्ट-देवता का पात्र-द्रव्य में आवाहन कर ताल-त्रय से दिग्-बन्धन कर धेनु, योनि, शंख, गालिनी मुद्रायें दिखा मत्स्य-मुद्रा से उसे आच्छादित कर संक्षेप में इष्ट-देवता का पूजन कर पात्र पर दश बार मूल-मन्त्र जपे। इस प्रकार पात्र को देवता स्वरूप समझ श्रीपात्र की पूजा गन्ध-पुष्पाक्षत से कर धूप-दीप दिखावे।

गुरु आदि अन्य पात्र-स्थापन

अपने दाहिने शुद्ध जल से भरा एक पात्र रख उसमें विशेषार्घ्य-बिन्दु डाल दे। यह प्रोक्षणी पात्र है। इससे समस्त प्रोक्षण-कर्म करे। घट के समीप १ गुरु-पात्र, इसके दाहिने २ भोग-पात्र और इसी क्रम से ३ शक्ति, ४ योगिनी, ५ वीर, ६ बलि, ७ पाद्य ८ आचमनीय आदि आठ[15] पात्र स्थापित करे। स्थापन-विधि यह है कि त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र (सामान्यार्घ्य जैसा) मण्डल रक्त-चन्दन से लिख 'ॐ आधार-शक्तये नमः' से गन्ध-पुष्पाक्षत से पूजन कर 'फट्' से आधार धो मण्डल पर रखे। 'ॐ वह्नि-दश-कलाभ्यो नमः' से आधार पर पूजन कर फिर पात्र को 'फट्'

---

[15]श्री-पात्र (विशेषार्घ्य) को लेकर नौ पात्र होते हैं। नौ पात्र स्थापित न कर सके, तो सात (पाद्य और आचमनीय को छोड़ कर) या पांच (पाद्य, आचमनीय, शक्ति और वीर को छोड़कर) या केवल तीन (श्री, गुरु और भोग) ही पात्र स्थापित करे। विशेष अशक्तावस्था में अकेले श्री-पात्र से ही समस्त पूजन हो सकता है।

से धोकर वामावर्त-क्रम-वाला 'आचमनीय-पात्रं स्थापयामि' और दक्षिणावर्त-क्रम-वाला 'ॐ गुरु-पात्रं स्थापयामि' कह आधार पर पात्र-स्थापन कर गन्धाक्षत से 'अमुक-पात्राय नमः' से पूजन कर पात्र में 'ॐ सूर्य-द्वादश-कलाभ्यो नमः' से पूजन कर 'नमः' से घटस्थ कारण से पात्र को भर अन्यान्य तत्व दे। फिर 'हूं' से अवगुण्ठन, 'फट्' से रक्षण, तीर्थ का आवाहन कर 'वं' से धेनु-मुद्रा से अमृतीकरण कर, योनि-मुद्रा प्रदर्शन कर मत्स्य-मुद्रा से आच्छादन कर 'ॐ' से गन्ध-पुष्प दे मूल-मन्त्र का दश बार जप कर विशेषार्घ्य (श्री-पात्र) का एक बिन्दु उसमें डाल दे। कर-क्षालन पात्र अपने पीछे रखे।

तर्पण

पात्र-स्थापन कर वीर या श्री-पात्र के अमृत से देव, ऋषि और पितृ-तर्पण कर दोनों हाथों से तत्व-मुद्रा से आनन्द-भैरव और आनन्द-भैरवी का तर्पण करे। यथा—ह्सक्षमलवरयूं आनन्द-भैरवाय वषट् आनन्द-भैरवं तर्पयामि नमः; सहक्षमलवरयीं आनन्द-भैरव्यै वौषट् आनन्द-भैरवीं तर्पयामि स्वाहा। इन दोनों का तर्पण भैरव-पात्र के अमृत से करे। यदि भैरव-पात्र स्थापित न हो, तो विशेषार्घ्यामृत से ही। फिर विशेषार्घ्य से दिव्यौघ, सिद्धौघ, मानवौघ और कुल-गुरुओं (नाम आवरण-पूजन में दिये हैं) का एक-एक बार तर्पण कर गुरु-पात्र से गुरु का तीन बार तर्पण कर श्री-पात्र से एक-एक बार परम-गुरु, परापर-गुरु और परमेष्ठि-गुरु का तर्पण करे। यथा—

ॐ अमुकानन्दनाथ परम-गुरुं तर्पयामि नमः, ॐ अमुका-नन्दनाथ परापर-गुरुं तर्पयामि नमः, ॐ श्रीमहाकालानन्दनाथ परमेष्ठि-गुरुं तर्पयामि नमः। तब श्री-पात्र अथवा भोग-पात्र से

(जैसा गुरु-क्रम हो) 'मूलं सांगां सायुधां सवाहनां सपरिवारां श्रीमहाकाल-सहितां श्रीमद्-दक्षिण-कालिकां तर्पयामि स्वाहा' से तीन बार तर्पण करे। अब तत्व-शोधन करे।

तत्व-शोधन

विशेषार्घ्य को छूकर दोनों हाथों से निम्नलिखित सात मन्त्रों से सम्पूर्ण शरीर को स्पर्श करे—

१ ॐ प्राणापान-समानोदान-व्याना मे शुद्धयन्तांज्योतिरहं विरजा विपाप्मा प्रकृत-भूयासं स्वाहा।

२ ॐ पृथिव्यप्तेजो वाय्वाकाशानि मे शुद्धयन्तां०।

३ ॐ प्रकृत्यहंकार-बुद्धि-मनः-श्रोत्राणि मे शुद्धयन्तां०।

४ ॐ त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राण-वचांसि मे शुद्धयन्तां०।

५ ॐ शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्धा मे शुद्धयन्तां०।

६ ॐ पाणि-पाद-पायूपस्थ-शब्दा मे शुद्धयन्तां०।

७ ॐ वायु-तेजः-भू-सलिलाकाशत्मानो मे शुद्धयन्तां०।

अब दक्षिण हथेली पर श्री-पात्रामृत से अधोमुख (स्वाग्र) त्रिकोण लिख माष-प्रमाण शुद्धि-खण्ड उसके तीनों कोनों पर और एक खण्ड बीच में रखे। वाम अंगुष्ठ, मध्यमा और अनामिका से अग्रकोण का शुद्धि-खण्ड 'क्रीं ह्रीं श्रीं आत्म-तत्वेन स्थूल देहं शोधयामि स्वाहा' मन्त्र से, ऊपर के वाम-कोण का खण्ड 'क्रीं ह्रीं श्रीं विद्या-तत्वेन सूक्ष्म-देहं शोधयामि स्वाहा' से, दक्ष-कोण का खण्ड 'क्रीं ह्रीं श्रीं शिव-तत्वेन पर-देहं शोधयामि स्वाहा' से और बिचले खण्ड को 'क्रीं ह्रीं श्रीं सर्व-तत्वेन तत्व-त्रयाश्रित-

जीवं शोधयामि स्वाहा' से क्रमशः ग्रहण करे।

बिन्दु-स्वीकार

इसके बाद तत्व-मुद्रा से द्वितीय तत्व ले भोग-पात्र वा श्री-पात्र-स्थित (जैसा गुरु-क्रम हो) अमृत-बिन्दु एक-एक बार निम्न-लिखित तीन मन्त्रों से स्वीकार करे—

(१) ॐ आर्द्रं ज्वलति ज्योतिरहमस्मि ज्योतिर्ज्वलति ब्रह्माहमस्मि अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि योऽहमस्मि सोऽहमस्मि ब्रह्माहमस्मि अहमेवाहं मां जुहोमि स्वाहा।

(२) ॐ त्वमेव प्रत्यक्षं सैवासि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्-वक्तारमवतु अवतु मां अवतु वक्तारं स्वाहा।

(३) ॐ यश्छन्दसामृषभो विश्व-रूपश्छन्दोभ्याऽध्यमृतात् सम्बभूव, समेन्द्रो मेधया स्पृणोतु, अमृतस्य देवधारणो भूयासं शरीरं मे विचर्षणम्, जिह्वा मे मधुमत्तमा, कर्णाभ्यां भूरि विश्रुवम्, ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयापहितः श्रुतं मे गोपाय स्वाहा।

वटुकादि-पूजन[16]

रक्त-चन्दन से त्रिकोण-मण्डल लिखकर 'ॐ मण्डलाय नमः'

---

[16]यह पूजन काश्मीर-क्रम में केवल पूजन के आदि में, गौड़-क्रम में आदि-मध्य और अन्त में अर्थात् तीन बार और केरल-क्रम में केवल एक बार अन्त में करना चाहिए।

से गन्धाक्षत से पूजनकर पूर्व दिशा में आधार-सहित वटुक का, दक्षिण में योगिनियों का, पश्चिम में क्षेत्रपाल का और उत्तर में गणेश का बलि-पात्र (जिनमें कारण-सहित शुद्धि आदि अन्य तत्व रहें) स्थापित करे। फिर—

(१) भैरव-पात्रामृत से वटुक-भैरव का तर्पण वाम-हस्ततत्व-मुद्रा से और दाहिने हाथ से पूजन 'ॐ वां वटुक-भैरवं तर्पयामि पूजयामि नमः' मन्त्र से करे। तब बलि-पात्र या श्री-पात्रामृत से वाम-हस्त की तत्व-मुद्रा से बलि उत्सर्ग करे। यथा—

ॐ एह्येहि देवी-पुत्र, वटुकनाथ, कपिल-जटा-भार-भासुर, त्रिनेत्र, ज्वालामुख! सर्व-विघ्नान्नाशय नाशय सर्वोपचार-सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा एष बलिः वां वटुकाय नमः।

(२) 'यां योगिनीस्तर्पयामि पूजयामि नमः' मन्त्र से योगिनियों का तर्पण-पूजन कर—'ॐ ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगन-तले भू-तले निष्कले वा सलिल-पवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा। क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृत-पदा धूप-दीपादिकेन प्रीत्या देव्यः सदा नः शुभ-बलि-विधिना पान्तु वीरेन्द्र-वन्द्याः, यां योगिनीभ्यः स्वाहा सर्व-योगिनीभ्यो हूँ फट् स्वाहा एष बलिः सर्व-योगिनीभ्यो नमः' मन्त्र से दक्षिण हस्त की तत्व-मुद्रा से बलि उत्सर्ग करे।

---

[17]महाकाल-संहिता के अनुसार वटुक के तर्पण और पूजन का मन्त्र—'ऐं ह्रीं श्रीं स्त्रीं सः स्हं कुल-कुमारं वटुकनाथं तर्पयामि पूजयामि नमः।' प्रत्येक महा-विद्या के एक-एक वटुक-भैरव हैं, जिनके नाम ये हैं—हेतु, त्रिपुरान्तक, वह्नि-वेताल, अग्नि-जिह्व, काल, कराल, एकपाद, भीम, त्रैलोक्य और सिद्ध।

(३) 'क्षां क्षेत्रपालं तर्पयामि नमः' से क्षेत्रपाल का तर्पण-पूजन कर वीर-पात्रामृत से 'ॐ त्रिशूलं डमरुं चैव कपालं शंखमेव च । दधानं कृष्ण-वर्णं तं भजेऽहं क्षेत्रपालकम् ।। क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्थान-क्षेत्रपाल धूप-दीपादि-सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा एष बलिः क्षां क्षेत्रपालाय नमः' मन्त्र से बलि उत्सर्ग करे ।[18]

(४) 'गं गणेशं तर्पयामि पूजयामि नमः' से गणपति-पूजन[19] कर 'गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वर वरद सर्व-जनं मे वशमानय बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा एष बलिः गं गणपतये नमः' मन्त्र से बलि दे ।

(५) 'क्ष्त्रीं सर्व-विघ्न-कृद्भ्यः सर्वेभ्यो भूतेभ्यो हूं फट् सर्व-भूतं तर्पयामि पूजयामि नमः' मन्त्र से सर्व-भूत का तर्पण और पूजन कर 'क्ष्त्रीं सर्व-विघ्न-कृद्भ्यः सर्वेभ्यो भूतेभ्यो हूं फट् एष बलिः सर्व-भूतेभ्यो नमः' मन्त्र से बलि का उत्सर्ग करे ।

(६) 'ॐ सर्व-पथिक-देवतांस्तर्पयामि पूजयामि नमः' मन्त्र से सर्व-पथिक देवताओं का तर्पण और पूजन कर 'एष बलिः सर्व-पथिक-देवताभ्यो नमः' मन्त्र से बलि उत्सर्ग करे ।

(७) 'हूं महाकाल-श्मशानाधिपइमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्न-निवारणं कुरु कुरु सर्व-सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष

---

[18]क्षेत्रपाल ४९ हैं । अतः यदि समूह को बलि प्रदान करना है, तो बहु-वचनान्त प्रयोग करे ।

[19]गणेश भी दसों महा-विद्याओं के पृथक्-पृथक् दस हैं, जिन के नाम ये हैं---एकाक्षर, द्वयक्षर, वल्लभ, चतुरक्षर, महा-गणेश वीर-गणेश, वश्य-गणेश, क्षिप्र-प्रसादन, हरिद्रा और सिंह-गणेश ।

बलि: श्रीमहाकाल-भैरवाय नमः' मन्त्र से महाकाल भैरव को और—

(८) 'ॐ ह्रीं श्रीं दक्षिणायै कालिकायै स्वाहा एष बलिर्नमः' मन्त्र से इष्ट-देवता को बलि उत्सर्ग करे।

'एष बलि: शिवा-रूप-जगदम्बायै श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः स्वाहा' मन्त्र से रात्रि के प्रथम प्रहर में श्मशान में अथवा बिल्व-मूल में वा नदी-तट इत्यादि निर्जन स्थानों में एक मनुष्य के पूर्ण आहार-प्रमाण शिवा-बलि निष्काम भाव से उत्सर्ग करे।

इसके बाद यन्त्रराज[20] पर ॐ मण्डूक, कालाग्नि रुद्र, ह्रीं आधारशक्ति, मूल-प्रकृति, कूर्म, शेष, पृथ्वी, सुधाम्बुधि, मणिद्वीप, चिन्तामणि-गृह, श्मशानाष्टक, पारिजात, उसके नीचे रत्न-वेदी, उस पर मणि-पीठ, मणिपीठ के चारों तरफ मुनिगण, देव-गण, शिवा-गण, शव-मुण्ड, पुनः मणि-पीठ के आग्नेय कोण में धर्म, नैर्ऋत में ज्ञान, वायव्य में वैराग्य और ईशान में ऐश्वर्य, पूर्व में अधर्म, दक्षिण में अज्ञान, पश्चिम में अवैराग्य और उत्तर में

---

[20] जैसे अन्तयर्जन में ब्रह्म-रन्ध्र देवता का सर्वोत्तम पीठ है, वैसे ही वाह्य यजन में श्री-चक्र वा श्री-यन्त्र सर्वश्रेष्ठ पीठ है। अतएव श्री-यन्त्र को महाशङ्ख, स्फटिक, शालग्राम-शिला आदि पर खुदवाकर, संस्कार कर पूजन करे। महा-शङ्ख का यन्त्र ही कादि (काली) और कहादि (तारा) कुल-द्वय में सर्वोत्तम है किन्तु इस पर पूजन करने का अधिकार सबको नहीं है। गुरु से आज्ञा लेकर ही इस पर पूजन करना चाहिये।

अनैश्वर्य, सम्वित्-रूपी कमल-नाल, सर्व-तत्वात्मक पद्म, प्रकृति-रूप पंखुड़ियाँ, विकार-मय केशर, पञ्चाशद्वर्ण-बीजाढ्य कर्णिका, अग्नि-मण्डल, सूर्य-मण्डल, चन्द्र-मण्डल, सत्व-गुण, रजो-गुण, तमो-गुण, आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, ह्रीं ज्ञानात्मा, दलों पर स्वाग्र दल-क्रम से इच्छा-शक्ति, ज्ञान-शक्ति, क्रिया-शक्ति, कामिनी-शक्ति, काम-दायिनी शक्ति, रति शक्ति, रति-प्रिया शक्ति और नन्दा (आनन्दा) शक्ति, मध्य में उन्मनी शक्ति तथा इन सबके ऊपर 'ह्सौः सदाशिव-महाप्रेत-पद्मासन'-इन पीठ-देवताओं में से शक्तियों का शक्ति-पात्रामृत से और अन्य का विशेषार्घ्यामृत से एक-एक बार वाम हस्त से तर्पण और दक्षिण हस्त से गन्ध-पुष्पाक्षत द्वारा पूजन करे । यथा—'ॐ मण्डूकं तर्पयामि पूजयामि नमः' आदि ।

अब प्राणायाम, ऋष्यादि-कर-षडङ्ग-व्यापक न्यास करे । फिर काम-कला का ध्यान कर मूल-देवता की पूजा करे ।
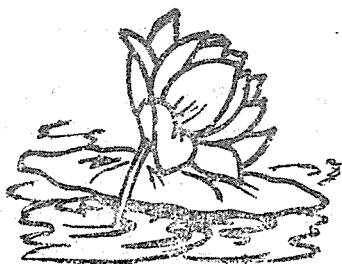
इष्ट-पूजन

मूलमन्त्र से यन्त्रराज पर तीन बार विशेषार्घ्य के विन्दु देकर देवता की उपस्थिति का अनुभव करे। फिर—

ॐ देवेशि भक्ति-सुलभे परिवार-समन्विते !
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥
दुष्पारे घोर-संसारे सागरे पतितं सदा ।
त्रायस्व वरदे देवि ! नमस्ते चित्परात्मिके ॥
ये देवा याश्च देव्यश्च चलितायां चलन्ति हि ।
आवाहयामि तान् सर्वान् कालिके परमेश्वरि ॥
प्राणान् रक्ष यशो रक्ष रक्ष दारान् सुतान् धनम् ।
सर्व-रक्षा-करी यस्मात् त्वं हि देवि! जगन्मये ॥
प्रविश्य तिष्ठ यज्ञेऽस्मिन् यावत्पूजां करोम्यहम् ।
सर्वानन्द-करे देवि ! सर्व-सिद्धि प्रयच्छ मे ॥
तिष्ठात्र कालिके मातः ! सर्व-कल्याण-हेतवे ।
पूजां गृहाण सुमुखि ! नमस्ते शङ्कर-प्रिये ॥

यह पढ़कर 'ॐ शताभिषेक-शमनय हूं फट् स्वाहा' से तीन बार पुष्पाञ्जलि दे। तब खड्गादि मुद्राएँ दिखावे। फिर एक फूल से सकलीकरण अर्थात् देवता के षडङ्गों की भावना करे। यथा—क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हुं, क्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट्। तब अंजली

को अर्घ्य के सदृशकर परमीकरण मुद्रा से 'इह परमीकृता भव' मन्त्र से परमीकरण कर पाँच पुष्पाञ्जलि दे तीन बार तर्पण करे। फिर निम्न मन्त्रों से पाद्यादि उपचारों से पूजन करे। यथा—

पाद्य—पाद्य-पात्र या विशेषार्घ्य (यदि पाद्यपात्र स्थापित न हो) से—

ॐ पाद्यं गृह्ण मया दत्तं सर्व-दुःखापहारकम् ।
त्रायस्व देवि ! वरदे, घोरादस्माद् भवार्णवात् ॥
इदं पाद्यं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

अर्घ्य—अर्घ्य-पात्रामृत से—

ॐ अर्घ्यं गृहाण देवेशि ! ज्ञान-रूपं यथार्थकम् ।
रक्ष मां पूर्ण-रूपे ! त्वं शिव-भावं प्रयच्छ मे ॥
इदमर्घ्यं श्रीदक्षिण-कालिकायै स्वाहा ।

आचमन—आचमनीय पात्र से—

ॐ इमा आपो मया भक्त्या तव पाद-तलेऽर्पिताः ।
आचामय महादेवि ! प्रीता शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

इदमाचमनीयं श्रीदक्षिण-कालिकायै वं (अथवा 'स्वधा' जैसा गुरु-क्रम हो)।

मधुपर्क—विशेषार्घ्य के अमृत से—

ॐ आयुर्बलं यशो वृद्ध्यै मधुपर्कं प्रगृह्यताम् ।
प्रीता भव महेशानि ! सर्व-सिद्धिं प्रयच्छ मे ॥

एष तैजसाधार - मधुपर्कः श्रीदक्षिण - कालिकायै स्वधा (वा 'वं')।

स्नान के पूर्व सुगन्धित तैल—

ॐ स्नेहं गृहाण स्नेहेन अम्बिके, करुणामयि !
जननी-स्नेह-सहजं अम्बे ! दर्शय मां प्रति ॥

सुगन्ध-स्नेहं श्रीदक्षिण-कालिकायै वषट् ।

उद्‌वर्त्तन (उबटन)—

ॐ उद्‌-वर्त्तनं मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वरि !
मामुद्‌-वर्त्तय नित्यं च शरीरं निर्मलं कुरु ॥

इदमुद्‌वर्त्तनं श्रीदक्षिण-कालिकायै वषट् ।

स्नानीय जल—

ॐ वारीदं हि ममामोदि प्रसन्न-मेध्यमेव च ।
मया निवेदितं भक्त्या स्नाह्यानेन सुरेश्वरि ॥

इदं स्नानीय-जलं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

अङ्ग पोछने का वस्त्र—

ॐ गात्र-प्रोच्छनकं वस्त्रमर्पितञ्च सुरेश्वरि !
गात्रं प्रोच्छय देवेशि ! देह-शुद्धिं प्रयच्छ मे ॥

इदं गात्र-प्रोञ्छनकं वस्त्रं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

वस्त्र (रक्त अथवा चित्रित)—

ॐ नाना-वर्ण-समायुक्तं पट्ट-सूत्रादि-निर्मितम् ।
वास-रक्तं च शुभदे ! गृहाण त्रिदशीश्वरि ॥

इदं वस्त्र-युगलं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

केश सँवारने के निमित्त कङ्कत (कंघा)—

ॐ केश-विन्यास-करणं कङ्कतं गज-दन्तजम् ।
गृहाण सुमुखी भूत्वा त्वं देवि ! श्रेयसे मम ॥
इदं कंकतं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

दर्पण—

ॐ दर्पणं विमलं रम्यं शुद्ध-बिम्ब-प्रदायकम् ।
आत्म - बिम्ब - प्रदर्शार्थमर्पयामि महेश्वरि ॥
इदं दर्पणं श्रीदक्षिण-कालिकायै वषट् नमः ।

अनुलेपन—

ॐ अनुलेपनमेतत्ते महा - सुरभि-शीतलम् ।
मया निवेदितं भक्त्या गृहीत्वा लेपयाङ्गकम् ॥
इदमनुलेपनं श्रीदक्षिण-कालिकायै वषट् ।

सिन्दूर—

ॐ अलिकादिक-शोभायाः कारकं राग-सम्भवं ।
अति-राग-समुत्पिञ्ज-सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥
इदं सिन्दूरं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

कज्जल—

ॐस्निग्धमुष्णं हृद्यत्तमं दृशां शोभा-करं तव ।
गृहीत्वा कज्जलं सद्यो नेत्राण्यञ्जय चित्परे ॥
एतत् कज्जलम् श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

पैर की शोभा के निमित्त अलक्तक—

ॐ पादयोश्च नखानां च द्युति-कारि मनोरमम् ।
अलक्तकमिदं देवि ! मया दत्तं प्रगृह्यताम् ।।
इदं अलक्तकं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

अक्षत—

ॐ अक्षतान् धवलान् देवि स्वर्ण-रौप्यादिभिः कृतान् ।
गृहाण जगदीशाने ! प्रसीद परमेश्वरि ।।
एतानक्षतान् श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

आभूषण—

ॐ स्वभाव-सुन्दराङ्गाय नाना-शक्त्याश्रयाय ते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते ।।
एतानि आभूषणानि श्रीदक्षिण-कालिकायै समर्पयामि नमः ।

भालालङ्करण बिन्दी—

ॐ भालालङ्करणं दिव्यं महा-सौभाग्य-सूचकम् ।
समर्पयामि ते भक्त्या गृह्ण नित्यं सुवासिनि ।।
इदं भालालङ्करणं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

बाह्वलङ्करण (चूड़ी)—

ॐ लाक्षादि-निर्मितं रम्यं बाह्वाभूषणमुत्तमम् ।
मया निवेदितं भक्त्या स्वीकुरुष्व महेश्वरि ।।
इदं बाह्वाभूषणं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

पुष्प—

ॐ इदं कुसुममामोदि ग्रामारण्य-समुद्भवम् ।
घ्राण-सन्तर्पणं हृद्यं मया दत्तं प्रगृह्यताम् ।।
इदं पुष्पं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

विल्व-पत्र

ॐ अमृतोद्भवं श्री-युक्तं महादेव-प्रियं सदा ।
पवित्रं ते प्रयच्छामि पत्रं मालूरणाखिनः ॥
इदं विल्व-पत्रं श्रीदक्षिण-कालिकायै वौषट् ।

दूर्वा—

ॐ नमस्ते सर्वगे देवि ! नमस्ते भुक्ति-मुक्तिदे !
दूर्वा गृहाण मातस्त्वं मां निस्तारय सङ्कटान् ॥
एतानि दूर्वा-दलानि श्रीदक्षिण-कालिकायै वौषट् ।

माला—

ॐ प्रभ्रष्टालम्बनां चापि तव देवि ! निवेदये ।
नाना-पुष्पेण रचितां स्तन-बद्धां सुगन्धिनीम् ॥
इदं माल्यं श्रीदक्षिण-कालिकायै वौषट् ।

धूप (धूप का स्थान देवता का वाम भाग है)—

ॐ कर्पूरागरु-सम्मिश्रो वनस्पति-रसोद्भवः ।
मया निवेदितो धूपो चोत्तमः देवि ! गृह्यताम् ॥
एष धूपः श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

वादन (घण्टा)—

'हूं' जय-ध्वनि मन्त्र-मातः स्वाहा ।'

दीप[२२]—

---

[२२] दीप घृत वा तैल का, कर्पूर-युक्त हो, कारण भगवती काली की साधना में कर्पूर एक आवश्यक पदार्थ है। यहाँ तक कि जप करने के समय पञ्च-तिक्त के स्थान में कर्पूर ही मुख में रखकर जप करना विहित है।

अग्निर्ज्योती रवि-र्ज्योतिश्चन्द्र-ज्योतिस्तथैव च ।
ज्योतिषामुत्तमं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
त्वं सूर्य्य-चन्द्र-ज्योतींषि विद्युदग्न्य तथैव च ।
त्वमेव जगतां ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
एष दीपः श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

नैवेद्य—

ॐ नाना-विधानि रम्याणि स्वादूनि रसवन्ति च ।
मया दत्तानि गृह्यन्तां नैवेद्यानि सुरार्चिते ॥
फल-मूलानि सर्वाणि ग्राम-काननजानि च ।
नानाकार - सुगन्धीनि गृहाण परमेश्वरि ॥
चतुर्विधमिदं भोज्यं देवि ! षड्भी रसैर्युतम् ।
सदा तृप्ति-करं रम्यमिदमन्नं प्रगृह्यताम् ॥
गव्य-सर्पिः पयो-युक्तं नाना-मधुर-मिश्रितम् ।
निवेदितं मया देवि परमान्नं प्रगृह्यताम् ॥
अमृतै रचितं दिव्यं घृत-खण्ड-विनिर्मितम् ।
पिष्टकं विविधं स्वादु गृहाण हर-बल्लभे ॥
मांसं विविधं रम्यं मीनं भर्जितमुत्तमम् ।
अपूपं सितया मिश्रं प्रतिगृह्याशु भुज्यताम् ॥
इदं नाना-विध-नैवेद्यं श्रीदक्षिण-कालिकायै समर्पयामि नमः ।

'ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' से विशेषार्घ्य का अमृत देकर पञ्च-ग्रास मुद्रायें दिखाते हुये भोजन करावे ।

मूल-मन्त्र से संशोधित जल—

ॐ श्रीकालि ! देव-देवेशि ! सर्व-तृप्ति-करं परं ।
अखण्डानन्द - सम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ।

इदं पानीय-जलं श्रीदक्षिण-कालिकायै समर्पयामि नमः ।

नारिकेल जल—

ॐ नारिकेलोदकं दिव्यं कर्पूरेण सुवासितम् ।
सितया भूरि सम्मिश्रं तृप्त्यर्थमिह कल्पितम् ।।

इदं पानीय-नारिकेलोदकं श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः ।

दूध—

ॐ पानानामुत्तमं पानं कवोष्णं पुष्टिदं पयः ।
गृहीत्वा परमेशानि ! तुष्टिं पुष्टिं प्रयच्छ मे ।।

इदं पानीय-दुग्धं श्रीदक्षिण-कालिकायै समर्पयामि नमः ।

तर्पण—भोग-पात्र को वाम हस्त की त्रिखण्डा मुद्रा[23] पर ले दाहिने हाथ में शुद्धि-खण्ड ले 'ॐ परमं वारुणी-कल्पं कोटि-कल्पान्त-कारिणि ! गृहाण शुद्धि-सहितं देहि मे मोक्षमव्ययम्' पढ़कर यन्त्र के पीछे भोग-पात्र का कुछ अमृत शुद्धि-खण्ड-सहित रखकर भोग-पात्र को आधार पर रख 'इदं शुद्धयासवं श्रीदक्षिण-कालिकायै निवेदयामि नमः' कहकर विशेषार्घ्य के अमृत से उत्सर्ग कर तीन बार देवता का तर्पण करे । 'ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा' से विशेषार्घ्य का अमृत अर्पण करे ।

---

[23] अनामा और मध्यमा को हथेली पर रख शेष तीनों अंगुलियों को सीधी करे ।

फिर मुख धोने के निमित्त जल—'इदं गण्डूषार्थं जलं श्री दक्षिण-कालिकायै निवेदयामि नमः।' से आचमन दे ताम्बूल अर्पण करे। यथा—

'ॐ फल-पत्रक-संयुक्तं कर्पूरादि-सुवासितम्। मुख-कान्ति-करं हृद्यं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥ एतानि ताम्बूलानि श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः।'

पञ्च पुष्पाञ्जलि देवता के शिर, स्तन, योनि, पाद और सर्वाङ्ग पर एक-एक बार अर्पण कर विशेषार्घ्यामृत से उत्सर्ग करे—'एष पञ्च-पुष्पाञ्जलिः श्रीदक्षिण—कालिकायै वौषट्।' तब योनि वा महा-योनि-मुद्रा से प्रणाम करे।

इस प्रकार इष्ट-देवता की पूजा कर देवी के दक्षिण भाग में महाकाल-भैरव की पूजा और तर्पण[24] करे। महा-काल का ध्यान यह है—

कोटि-कालानलाभासं चतुर्बाहुं त्रिलोचनम्।
श्मशानाष्टक-मध्यस्थं मुण्डाष्टक-विभूषितम्॥
पञ्च-प्रेत-स्थितं देवं त्रिशूलं डमरुं तथा।
खड्गञ्च खर्परञ्चैव वाम-दक्षिण-योगतः॥
बिभ्रतं सुन्दरं देहं श्मशान-भस्म-शोभितम्।
नाना-शवैः क्रीडमानं कालिकां हृदय-स्थिताम्॥
लालयन्तं रतासक्तं घोर-चुम्बन-तत्परम्।
गृद्ध्र - गोमायु - संयुक्तं फेरवी-गण-संयुतम्॥

[24] विशेष पूजा में पञ्चोपचार वा षोडशोपचार करे। नित्य-पूजा में तर्पण और पूजन ही पर्याप्त है।

जटा-पटल-शोभाढ्यं सर्व-शून्यालये स्थितम् ।
सर्व-शून्यं मुण्ड-भूषं प्रसन्न-वदनं शिवम् ।।

अर्थात् कोटि-कल्पान्त अग्नि की ज्वाला के सदृश ज्योतिमान्, धूम्र-वर्ण, चार हाथवाले, तीन आँखवाले, मुण्डाष्टक से विभूषित, श्मशानाष्टक में पाँच प्रेतों (ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव) के ऊपर स्थित, वाम-हस्त में त्रिशूल और डमरु तथा दक्षिण-हस्त में खड्ग और खप्पर, सुन्दर शरीर में चिता-भस्म लगाये, अनेक मुर्दों के संग खेलते हुये, काली को हृदय पर रख घोर चुम्बनादि रूप में आनन्द-क्रीड़ा करते हुये, गृद्ध, गोमायु, गीदड़ आदि से घिरे, जटा-जूट फहराते, मुण्ड-माला से भूषित, प्रसन्न-वदन, पूर्ण निर्जन वा एकान्त स्थान में स्थित पुरुष-रूप ब्रह्म शिव का ध्यान करना चाहिये ।

तदनन्तर गन्धर्व-तन्त्रोक्त महाकाल-कवच पढ़कर कम-से-कम दश बार इस मन्त्र-राज का जप करे—'हूं हूं महाकाल प्रसीद प्रसीद ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।' जप समर्पण करके महाकाल की स्तुति कर योनि-मुद्रा से प्रणाम करे ।

आवरण-पूजन

अब देवता से उसके आवरण-देवताओं के पूजन की आज्ञा ले—'श्रीदक्षिण-कालिके मातर्निजावरण-देवता-पूजनाज्ञां देहि ।' आज्ञा मिल गई, ऐसी भावना कर तर्पण-पूजन करे । यथा—

पहला आवरण—क्रां हृदयाय नमः हृदयं तर्पयामि पूजयामि नमः—अग्नि-कोण, क्रीं शिरसे स्वाहा शिरो त० पू० नमः—ईशान, क्रूं शिखायै वषट् शिखां त० पू० नमः—नैर्ऋत-कोण, क्रैं कवचाय हुं कवचं त० पू० नमः—वायु-कोण, क्रौं नेत्र-त्रयाय

वौषट् नेत्र-त्रयं त० पू० नमः—पूर्व-भाग, क्रः अस्त्राय फट् अस्त्र त० पू० नमः—पृष्ठ-भाग।

समर्पण—'ॐ अभीष्ट-सिद्धिं मे देहि शरणागत-वत्सले !
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥
—विशेषार्घ्यामृत से

दूसरा आवरण---प्रथम त्रिकोण के अन्दर विन्दु के वायव्य-कोण से लेकर ईशान-कोण तक गुरु-पंक्तियों की भावना कर प्रथम पंक्ति में गुरु, परम गुरु और परमेष्ठि गुरु (इनके नाम पहले कहे गये हैं) का तर्पण और पूजन करे। गुरु का गुरु-पात्र से और परम गुरुओं का श्री-पात्र से तर्पण और पूजन करे। द्वितीय पंक्ति में दिव्यौघ गुरुओं--महादेव्यम्बा महादेवानन्दनाथ, त्रिपुराम्बा और त्रिपरभैरवानन्दनाथ का। तीसरी पंक्ति में सिद्धौघ---ब्रह्मानन्दनाथ, पूर्णदेवानन्दनाथ, चलचित्तानन्दनाथ, चलचलानन्दनाथ (लोचनानन्दनाथ—पाठान्तर), कुमारानन्द-नाथ, क्रोधानन्दनाथ, वरदानन्दनाथ, स्मरदीपानन्दनाथ, मायाम्बा और मायावत्यम्बा—का। चौथी पंक्ति में मानवौघ--विमलानन्दनाथ, कुशलानन्दनाथ, भीमसेनानन्दनाथ, सुधाकरानन्द-नाथ, मीनानन्दनाथ, गोरक्षानन्दनाथ, भोजदेवानन्दनाथ, प्रजापत्यानन्दनाथ, मूलदेवानन्दनाथ, रन्तिदेवानन्दनाथ, विघ्नेश्वरा-नन्दनाथ, हुताशनानन्दनाथ, समयानन्दनाथ, सन्तोषानन्द-नाथ, श्मशानानन्दनाथ और सर्वानन्दनाथ—का। पाँचवीं पंक्ति में कुलगुरुओं--प्रह्लादानन्दनाथ, सनकानन्दनाथ, कुमारानन्द-नाथ, वशिष्ठानन्दनाथ, क्रोधानन्दनाथ, सुखानन्दनाथ, ध्याना-नन्दनाथ और बोधानन्द-नाथ--का तर्पण-पूजन करे।

ॐ अभीष्ट०'''द्वितीयावरणार्चनम् ॥

तीसरा आवरण---पाँचों त्रिकोणों के पन्द्रहों कोणों पर सब से भीतर के त्रिकोण के स्वाग्र कोण अर्थात् नीचे के कोण से वामावर्त्त-क्रम से काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी, विप्रचित्ता, उग्रा, उग्रप्रभा, दीप्ता, नीला, घना, वलाका, मात्रा, मुद्रा और मिता इन पन्द्रह नित्याओं का तर्पण-पूजन करे। ये श्यामवर्ण की हैं, गले में मुण्ड-माला है, दाहिने हाथ में खड्ग और वाम हाथ में तर्जनी है।

ॐ अभीष्ट-सिद्धि...तृतीयावरणार्चनम् ॥

चौथा आवरण---आठों दलों पर पूर्वादि में वाम-क्रम से--१- ब्राह्मी, जो स्वर्ण-वर्णा हैं, हंस पर सवार, चार मुख चार भुजा तीन नेत्रवाली, चारों हाथ में कमल, दण्ड, पद्माक्ष-माला और ब्रह्म-कूर्च लिये जटाजूट-धारिणी, मुस्कुराती हैं; २ नारायणी, जो दिव्य ज्योतिवाली, श्यामवर्ण की, गरुड़ पर सवार, नाना अलंकारों से भूषित, सुन्दर केशवाली, चार हाथवाली, घण्टा, शंख, कपाल और चक्र लिये, आसव-पान से घूर्णित नेत्रवाली हैं; ३ माहेश्वरी, जो बैल पर सवार, गौर-वर्ण, तीन नेत्र-वाली, छ:हाथवाली, जिनमें कपाल, डमरु, वर, अभय, त्रिशूल और टङ्क हैं, नाना आभरणों से भूषिता हैं; ४ चामुण्डा, जो अट्टहास कर रही हैं, दाँत बाहर निकले हैं अर्थात् वहुत लम्बे हैं, विशाल काया, त्रिनेत्रा, देखने में नील-कमल के सदृश, नर-मुण्ड की माला गले में, प्रसन्न मुखवाली, चार हाथवाली, खड्ग, त्रिशूल, कपाल, नृमुण्ड का खेटक लिये प्रेत पर सवार, प्रमत्ता हैं; ५ कौमारी, जो कुंकुम-सदृश लालवर्णवाली, मयूर पर सवार,

त्रिनेत्रा, चार हाथ वाली, शक्ति, पाश, अंकुश और अभय लिये हैं; ६ अपराजिता, जो पीतवर्ण की, चारों हाथ में अक्ष-सूत्र, वर, कपाल और मातुलुङ्ग; ७ वाराही, जो धूम्र-वर्ण की वराह शरीरवाली, शुभा, चार हाथों में फलक, खड्ग, मूषल, हल लिये हैं; ८ नारसिंही, जो नृसिंह सदृश हैं---इन आठ शक्तियों का पूजन-तर्पण करे।

ॐ अभीष्ट०...चतुर्थावरणार्चनम् ॥

पाँचवाँ आवरण---आठों दलों के केसरों पर असिताङ्ग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण और संहार इन आठ भैरवों का तर्पण-पूजन करे। ध्यान---भीषण मुखवाले, त्रिनेत्र, अर्ध-चन्द्र-विभूषित, आठ वर्ष की उम्रवाले, छोटे-छोटे केश से भूषित और दोनों हाथों में दंड और शूल लिये हैं। इनके साथ क्रमशः भैरवी, महाभैरवी, सिंह, धूम्र, भीम, उन्मत्त, वशिनी और मोहिनी इन आठ भैरवियों का तर्पण-पूजन करे। ध्यान---कोटि-चन्द्र के समान ज्योतिवाली, पूर्ण शुभ्र-वदना, पाँच मुख-वाली, त्रिनेत्रा और अठारह हाथवाली हैं।

ॐ अभीष्ट०...पञ्चमावरणार्चनम् ॥

छठा आवरण---भूपुर की आठों दिशाओं में पूर्वादि-क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर और ईशान का; ईशान कोण के बीच को ऊर्ध्व मानकर ब्रह्म का; नैर्ऋत कोण और पश्चिम के बीच पाताल मान अनन्त का पूजन-तर्पण करे। इन्द्र—नील-वर्ण, ऐरावत पर सवार, हजार नेत्रवाले, हाथ में वज्र, शिर पर मुकुट। अग्नि—रक्त-वर्ण, हाथ में शक्ति, त्रिनेत्र, छाग पर सवार। यम—श्याम-वर्ण, हाथ में खड्ग, प्रेत-वाहन। वरुण---गौर-वर्ण, हाथ में पाश, मगर पर सवार। वायु---नील-

वर्ण, हाथ में ध्वजा, हरिण पर सवार। कुबेर---श्यामवर्ण, हाथ में गदा, मनुष्य पर सवार। ईशान (शिव)---गौर-वर्ण, त्रिनेत्र, हाथ में त्रिशूल, बैल पर सवार हैं। ब्रह्मा---स्वर्ण-वर्ण (पीला), चार मुखवाले जटाधारी, चारों हाथों में अक्ष, सूत्र, पद्म, दण्ड और कमण्डलु लिये, हंस पर सवार हैं। अनन्त---श्याम-वर्ण, चक्र, गदा और पद्म लिए, नाना अलंकारों से भूषित और गरुड़ पर सवार, सहस्र कलाओं से विभूषित हैं। तब इनके वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, ध्वजा, गदा, त्रिशूल, पद्म और चक्र इन अस्त्रों का क्रमशः तर्पण-पूजन करे।

ॐ अभीष्ट०...षष्ठावरणार्चनम् ।

सातवाँ आवरण---खड्ग, मुण्ड, वर और अभय का तर्पण-पूजन करे।

ॐ अभीष्ट०...सप्तमावरणार्चनम् ।

इसके बाद—'**ॐ अनुज्ञां देहि मातर्मे पूजनस्य तवाम्बिके ! आभरणानां सर्वेषां तव प्रसाद-हेतवे ।।**' इस मन्त्र से आज्ञा ले आभरण-पूजा करे। आज्ञा मिली, ऐसी भावना कर पूजन करे--

ॐ चन्द्रं तर्पयामि पूजयामि नमः, ॐबाल-शव-युग्म-कर्णावतंसौ तर्पयामि पूजयामि नमः, ॐ पञ्चाशद्-मुण्ड-मालां तर्पयामि पूजयामि नमः, ॐ सहस्र-शव-कर-काञ्चीं तर्पयामि पूजयामि नमः, ॐ नाना-विधाभरणानि तर्पयामि पूजयामि नमः ।

ॐ अभीष्ट०...तवैवाभरणार्चनम् ।

तब तीन वार पैर पर पुष्पांजलि देकर पाँच वार तर्पण और पूजन करे—'**क्रीं सांगां सायुधां स-परिवारां स-वाहनां महाकाल-सहितां शुद्ध-ककार-त्रिपञ्च-भट्टार-पीठ-स्थितां श्रीमद्-दक्षिण-**

कालिकां तर्पयामि पूजयामि नमः ।' योनि-मुद्रा से प्रणाम कर जगन्मङ्गल-कवच से एक पुष्पाञ्जलि दे । इसका विनियोग इस प्रकार है—

'ॐ श्रीजगन्मङ्गलस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः, छन्दोऽनुष्टुप्, देवताऽस्य कालिका दक्षिणेरिता, महाकाल-सहितायाः श्रीमद्-दक्षिण-कालिकायाः प्रीत्यर्थे कल्पोक्त-फलाप्तये च पुष्पाञ्जलि-दाने विनियोगः ।'

इसमें आदि और अन्त भाग की फल-श्रुति पढ़ने की आवश्यकता नहीं है । फल इसका बहुत है । तब काली-प्रत्यङ्गिरा, काली-कवच, काली-अर्गला, काली-कीलक और श्रीजगन्मङ्गल-कवच का पाठ करे । (देखें 'श्रीकाली-स्तव-मञ्जरी')

मन्त्र-जप

आम्नाय और क्रम-विहित पूर्व-संस्कृत माला[25] में, जिसमें देवता की प्राण-प्रतिष्ठा की गई है, जप करे ।

पहले चौर-गणेश के मन्त्र का न्यास करे, जिससे जप-फल की चोरी नहीं होती । यथा—

ब्रह्म-रन्ध्र—'क्रीं', दोनों कान-ह्लीं ह्लीं, दोनों नेत्र—ह्लीं ह्लीं, दोनों नासा-पुट—हूं हूं, मुख—श्रीं श्रीं, नाभि—ह्सौः ह्सौः, लिङ्ग—क्लीं क्लीं, गुह्य—प्लूं प्लूं, भ्रू-मध्य—हूं फट् ।

---

[25] पूर्वाम्नाय में स्फटिक, दक्षिणाम्नाय में रुद्राक्ष (रुद्राक्ष-माला में शक्ति-मन्त्र का जप दिन में न करे), पश्चिमाम्नाय में मूँगे और मोती, उत्तराम्नाय में दन्त और शंख (महाशंख) की माला प्रशस्त है । इनमें उत्तम नर-दन्त-माला है, जिसका अनुकल्प गज-दन्त है । दन्त-माला के अभाव में नारिकेल की माला निर्दिष्ट है ।

मन्त्र-शुद्धि—प्रत्येक मातृका-वर्ण आदि में दे अनुलोम और विलोम-क्रम से मूल-मन्त्र का जप करने से मन्त्र की शुद्धि होती है। यथा—'अं मूलं' से 'क्षं मूलं' और पुनः 'क्षं मूलं' से 'अं मूलं'।

मन्त्र-शिखा—कुण्डलनी का तत्व लय करते आरोहण-अवरोहण करने से जो तेज-शिखा मूलाधार से ब्रह्म-रन्ध्र तक उत्पन्न होती है और अभ्यास द्वारा जो सर्वदा वर्तमान रहती है, उसी को मन्त्र-शिखा कहते हैं। इसकी भावना करते हुये जप करे।

मन्त्र-चैतन्य—गुरु, मन्त्र, देवता और आत्मा की एकता की भावना ही मन्त्र-चैतन्य है। 'क्लीं श्रीं ह्रीं अं मूलं क्ष' तक और इसी को विलोम-क्रम से १०८ बार जप करने अथवा 'ईं'-पुटित मूल-मन्त्र का जप करने से मन्त्र-चैतन्य होता है।

मन्त्रार्थ—देवता-रूप का प्रत्येक बार के जप में चिन्तन ही मन्त्रार्थ है, यही वाच्य-वाचक का अभेद-ज्ञान है।

कुल्लुका—सिर में गुरु का और हृदय में देवता का ध्यान कर कुल्लुका का जप करे। पहले विनियोग—'ॐअस्य श्रीकुल्लुका-मन्त्रस्य अघोर ऋषिः, विराट् छन्दः, कुल्लुका काली देवता, ह्रीं बीजं, क्लीं शक्तिः, हूं कीलकं, श्रीदक्षिण-कालिका-मन्त्र-जपाङ्गत्वेन कुल्लुका-जपे विनियोगः।' फिर ऋष्यादिन्यास—'ॐशिरसि अघोर-ऋषये नमः, मुखे विराट्-छन्दसे नमः, हृदये श्रीकुल्लुका-काली-देवतायै नमः, गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः, पादयोः क्लीं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे हूं कीलकाय नमः।' तब 'क्लां क्लीं क्लूं क्लैं क्लौं क्लः' से कर-षडङ्ग-न्यास कर सिर पर कुल्लुका-मन्त्र 'क्रीं हुं स्त्रीं फट्' का दस बार जप करे।

सेतु, महा-सेतु और निर्वाण—सेतु 'ॐ' का हृदय में दस बार, महा-सेतु 'क्रीं' का दस बार कण्ठ पर जप करे। मणिपुर (नाभि)

में दश बार निर्वाण-मन्त्र का जप करे यथा—'अं मूलं से क्षं मूलं' तक, अन्त में 'ॐ'।

योनि-मुद्रा की भावना—सिर पर गुरु का ध्यानकर त्रिकोण (योनि) रूपिणी देवता का ध्यान षट्-चक्र के सब चक्रों में कर 'ऐं' (योनि-बीज) का दस-दस बार जप करे।

तब प्राणायाम-त्रय, ऋष्यादि, करांग-न्यास-द्वय और व्यापक-न्यास कर जिह्वा-शोधन 'क्रीं क्रीं क्रीं ॐ ॐ ॐ क्रीं क्रीं क्रीं' मन्त्र का सात बार जप करके करे। मन्त्र-प्राण-योग के लिए 'ह्रीं मूलं ह्रीं' मन्त्र सात बार जपे। फिर दीपिनी 'ॐ मूलं ॐ' सात बार जपे। निद्रा-भंग 'ईं मूलं ईं' मन्त्र के सात बार जप करने से होता है और अशौच-भंग 'ॐ मूलं ॐ' के सात बार के जप से होता है।

मन्त्र के अवयव—(१) एकाक्षरी विद्या : बिन्दु—कर्ण, नाद—मुख-मण्डल, ककार—हृदय, रकार—नेत्र, दीर्घ ईकार—कीलक। (२) द्वाविंशाक्षरी विद्या-राज्ञी : क्रीं—मस्तक, क्रीं—ललाट, क्रीं—नेत्र-त्रय, हूं—नाक, हूं—मुख, ह्रीं—कर्ण-द्वय, ह्रीं—ग्रीवा, द-कार—चिबुक, क्षि—दन्त, णे—ओष्ठ-द्वय, का—स्तन-द्वय, लि—पृष्ठ-देश, के—बाहु-द्वय, क्रीं—नाभि-देश, क्रीं—नितम्ब, हूं—योनि, हूं—उरु-युग्म, ह्रीं—जानु-युग्म, ह्रीं—गुल्फ-देश, स्वा—पद-द्वय, हा—नख।

जप-विधि—तब माला का तर्पण और पूजन 'श्रीदक्षिण-कालिकाक्ष-मालां तर्पयामि पूजयामि नमः' मन्त्र से करे। 'ॐ माले माले महा-माले सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि! चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।' पढ़कर उसे हाथ में ले। 'ॐ गं

अविघ्नं कुरु माले! त्वं जप-काले तु सर्वदा। निर्विघ्नं कुरु देवेशि! दन्त (अक्ष) माले! नमोऽस्तु ते॥' से माला को प्रणाम कर उसे मध्यमा अंगुली के मध्य पर्व पर रख अंगूठे के अग्रभाग से स्पर्श कर 'ॐ' उच्चारण कर देवता-ध्यान-पुरःसर जप कर 'ॐ' का उच्चारण कर 'ॐ त्वं माले! सर्व-देवानां प्रीतिदा शुभदा मम। शुभं कुरुष्व मे भद्रे! यशो वीर्यं च सर्वदा।' पढ़ माला को सिर पर रख सेतु और महा-सेतु का पूर्ववत् जप कर प्राणायाम, ऋष्यादि, कर-षडङ्ग, व्यापक न्यास करे। विशेषार्घ्य का अमृत हाथ में ले देवता के वाम हस्त में जप समर्पण करे—'ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्-प्रसादान्महेश्वरि॥ इदं जपं श्रीदक्षिण-कालिका-देव्यै समर्पयामि स्वाहा।' योनि-मुद्रा से प्रणाम कर 'ह्रीं सिद्ध्यै नमः' पढ़ माला का पुनः पूजन कर गुप्त स्थान में रखे।

जप के पश्चात् हवन-कर्म कर स्तवादि का पाठ करे।[26]

संक्षिप्त नित्य-हवन-विधि

अपने दाहिने भाग में एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा चार अंगुल ऊँचा मिट्टी का स्थण्डिल बना उसे मूल-मन्त्र से देखकर और अभिमन्त्रित कर 'फट्' से कुशा से प्रोक्षण कर इस पर रक्त-चन्दन से एक स्वाग्र त्रिकोण लिखे। तब अग्नि को मूल-मन्त्र से देखकर 'फट्' कह, अस्त्र-मुद्रा से रक्षण कर, 'हूं फट् क्रव्यादेभ्यो नमः' से अग्नि को एक चिनगी नैऋत्य कोण में

---

[26]एक मत यह भी है कि जप के पश्चात् स्तवादि पाठ, तब हवन होता है। गौड़-क्रम में नैवेद्य के बाद, काश्मीर-क्रम में पञ्चोपचार वा षोडशोपचार-पूजन के बाद और केरल-क्रम में पूजान्तर में हवन होता है।

रख दे। फिर मूल-मन्त्र से स्थण्डिल (त्रिकोण) पर अग्नि-स्थापन कर 'ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहा, ॐ स्वः स्वाहा, ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा' से व्याहृति-हवन कर वह्नि के षडङ्गों को एक-एक आहुति दे। यथा—ॐ सहस्रार्चिषे हृदयाय नमः स्वाहा। ॐ स्वस्ति-पूर्णाय शिरसे स्वाहा। ॐ उत्तिष्ठ-पुरुषाय शिखायै वषट् स्वाहा। ॐ धूम-व्यापिने कवचाय हुं स्वाहा। ॐ सप्त-जिह्वाय नेत्र-त्रयाय वौषट् स्वाहा। ॐ धनुर्द्धराय अस्त्राय फट् स्वाहा।

फिर 'ॐ वैश्वानर, जातवेद, इहावहलोहिताक्ष! सर्व-कर्माणि साधय स्वाहा।' इस मन्त्र से तीन बार आहुति दे। तब अग्नि में देवता का ध्यान कर एक फूल कर-कच्छप मुद्रा से ले। श्वास द्वारा प्राण-शक्ति को परा-शक्ति से ब्रह्म-रन्ध्र में मिला निःश्वास द्वारा फूल में रख (भावना कर) फूल को अग्नि में रखकर देवता का स्थापन अग्नि में इस मन्त्र से करे—'ॐ क्रीं दक्षिण-कालिके! देवि! इहागच्छ इहागच्छ। इह तिष्ठ।' तब देवता को एक पुष्पाञ्जलि दे पञ्चोपचारों से पूजाकर देवता के षडङ्गों को एक-एक आहुति दे—ॐ क्रां हृदयाय नमः स्वाहा। ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्रूं शिखायै वषट् स्वाहा। ॐ क्रैं कवचाय हुं स्वाहा। ॐ क्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट् स्वाहा। ॐ क्रः अस्त्राय फट् स्वाहा।

तत्पश्चात् 'क्रीं श्रीं दक्षिण-कालिकायै स्वाहा' मन्त्र से पचीस, 'क्रीं सांगायै सायुधायै सवाहनायै सपरिवारायै श्रीदक्षिण-कालिकायै स्वाहा' से तीन, 'क्रीं स्वाहा' से या विद्या-राज्ञी से देने में 'क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा' से सोलह बार आहुति दे। 'क्रीं वौषट्' से पूर्णाहुति ताम्बूल, पूगी-फल, अक्षत और घृत से दे। तब 'श्रीदक्षिणे कालिके! पूजि-ताऽसि प्रसीद क्षमस्व' कह विशेषार्घ्य-बिन्दु अग्नि में डाल संहार-

मुद्रा से तेजो-रूप देवता को अपने में वापस ले आवे। फिर अग्नि का विसर्जन इस मन्त्र से करे—'ॐ भो भो वह्नि-महाशक्ते ! सर्व-कर्म-प्रसाधक ! कर्मान्तरेऽपि सम्प्राप्ते सान्निध्यं कुरु सादरम् ॥ ॐ अग्ने! पूजितोऽसि प्रसीद क्षमस्व।' फिर भस्म से तिलक मूल-मन्त्र से लगाये।

पुष्पाञ्जलि, स्तोत्र-पाठादि

इसके बाद देवता को पञ्च-पुष्पाञ्जलि दे। तीन बार पुनः तर्पण और पूजनकर हृदय, उपनिषत्, शतनाम, कुल-सर्वस्व, सहस्र-नाम अथवा सर्व-साम्राज्य-मेधा ककारादि सहस्रनाम जो केवल क्रम-दीक्षितों के हेतु है और कर्पूरादि-स्तवराज आदि का पाठ करे।

नीराजन आदि

स्तोत्रादि-पाठ के पश्चात् एक पुष्पाञ्जलि देकर योनि-मुद्रा से प्रणाम करे। फिर नीराजन (आरती) करे। यथा—सोने, चाँदी, ताँबे या काँसे आदि के पात्र पर सिन्दूर से अष्ट-दल लिखकर जौ अथवा गेहूं के आटे को दूध में सान नौ दीप बना कर आठ दलों पर और एक बीच में रख कर्पूर-गर्भ वर्तिका दे शुद्ध घी से भर मूल-मन्त्र के दस बार जप से अभिमन्त्रित कर 'ह्रीं' मन्त्र से जलावे। अब 'श्रीं ह्रीं ग्लूं स्लूं म्लूं प्लूं ल्लूं ह्रीं श्रीं' इस मन्त्र के तीनबार जप से दीप को अभिमन्त्रित कर चक्र-मुद्रा दिखा--'क्रीं समस्त-चक्र-चक्रेशि-युते देवि परात्मिके ! आरार्तिकं गृहाणेदं कालिके ! मम सिद्धये ॥ इमं दीप-मालिकां श्रीदक्षिण-कालिकायै नमः' इस मन्त्र से अर्पण करे। विशेषार्घ्यामृत से उत्सर्ग कर घंटा बजाते हुये सात वा नौ बार देवता के सिर से

पैर तक स्तोत्र वा मूलमन्त्र पढ़ते हुये आरार्तिक करे। तब योनि-मुद्रा से प्रणाम करे। प्रणाम कर चामर डुलाते दक्षिण पार्श्व दिखलाते 'ॐ काली विदध्यान्मम जीव-रक्षां तथा कराली मम देह-रक्षाम्। दुर्गाऽट्टहासैर्मम शत्रु-नाशं करोतु, तारा विदधातु राज्यम्॥' पढ़ते हुये तीन बार प्रदक्षिणा [27] करे।

ततः साष्टांग प्रणाम [28] करे। प्रणामानन्तर पूर्ण नैवेद्य देकर पूर्ववत् पानीय जल आदि निवेदन कर तीन बार तर्पण कर पुनराचमनीय, ताम्बूल और एक पुष्पाञ्जलि देकर किङ्किणी स्तोत्र पढ़ते हुए पंच पुष्पांजलि दे—

ॐ नान्यं वदामि न शृणोमि न चिन्तयामि।
नान्यं स्मरामि न भजामि न चाश्रयामि॥
त्यक्त्वा त्वदीय-पद-पङ्कजमादरेण।
मां त्राहि देवि! कृपया मयि देहि सिद्धिम्॥१
ॐ अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा वैकल्यान्मनसोऽपि वा।
यन्न्यूनमतिरिक्तं च तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि॥२॥
ॐ द्रव्य-हीनं क्रिया-हीनं श्रद्धा-मन्त्र-विवर्जितम्।
तत्सर्वं कृपया देवि! क्षमस्व त्वं दया-निधे॥३॥

---

[27] प्रदक्षिणा का उत्तम कल्प १०८ बार है। इससे सब प्रकार की कामनाएँ सिद्ध होती हैं।

[28] स्त्री-देवता को दक्षिण पार्श्व दिखाकर प्रणाम किया जाता है।

ॐ यन्मया क्रियते कर्म जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिषु ।
तत्सर्वं तावकी पूजा भूयात् भूत्यै च मे शिवे ॥४॥
ॐ यन्मया क्रियते कर्म सुमहत् स्वल्पमेव वा ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! त्वदन्या नो गतिर्मम ॥५॥

पुनः इस मन्त्र से पुष्पांजलि दे—

ॐ शक्नुवन्ति न ते पूजां कर्त्तुं ब्रह्मादयः सुराः ।
अहं किंवा करिष्यामि मृत्यु-धर्मा नरोऽल्पधी ॥
न जानेऽहं तेऽम्ब ! रूपं न शरीरं न वा गुणान् ।
एकामेव हि जानामि भक्तिं त्वच्चरणाब्जयोः ॥
तां भक्तिं हृदि सम्भाव्य यजनं मे प्रगृह्य च ।
तिष्ठ देवि ! हृदि प्रज्ञे ! मह्यं देहि वरान् बहून् ॥

अन्त में अपराध-क्षमापन के निमित्त एक पुष्पांजलि दे—

ॐ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यन्मया क्रियते सदा ।
तव कृत्यमिदं सर्वमिति मत्वा क्षमस्व माम् ॥

आत्म-समर्पण

विशेषार्घ्य का अमृत हाथ में लेकर 'ॐ इतः पूर्वं प्राण-बुद्धि-देह-धर्माधिकारतो जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिषु सर्वास्ववस्थासु मनसा वाचा कर्मणा यत्स्मृतं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा । मदीयञ्च सकलं श्रीदक्षिण-कालिकाम्बायै समर्पयामि स्वाहा' पढ़कर देवता के चरणों में समर्पण करे ।

विसर्जन

घण्टा बजाते हुये विशेषार्घ्यामृत से 'ॐ क्रीं सांगा सायुधा सवाहना सपरिवारा महाकाल-सहिता श्रीमद्-दक्षिण-कालिका पूजितासि प्रसीद क्षमस्व' इस मन्त्र को पढ़कर पूजन सम्पूर्ण करे।

यन्त्र-लेप (यन्त्र पर चन्दन, सिन्दूर आदि) मूलमन्त्र पढ़कर अपने ललाट में लगावे।[२९]

तत्पश्चात् ईशान कोण में त्रिकोण-मण्डल रक्तचन्दन से लिख कर उस पर एक पात्र रख निर्म्माल्य-वासिनी चण्डेश्वरी-देवी का निर्माल्य उठा 'ॐ निर्माल्य-वासिन्यै चण्डेश्वर्य्यै नमः' कह पूजा करे। तब नैवेद्य का किञ्चित् भाग ले उच्छिष्टचाण्डालिनी को इस मन्त्र से बलि दे—'ॐ उच्छिष्ट-चाण्डालिनि सुमुखि देवि महा-पिशाचिनि ! इमं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा।'

पात्रोद्वासन

विविध पात्रों के अधिकारी निम्न प्रकार हैं। इसी क्रम से पात्रों का उद्वासन करे—

विशेषार्घ्य—स्वयं पूजक। भोग-पात्र—सभी। गुरु-पात्र—गुरु (अनुपस्थिति में जल में विसर्जन)। वीर-पात्र-वीर, (अनुपस्थिति में जल में विसर्जन)। शक्ति-पात्र—शक्ति, अनुपस्थिति में जल में विसर्जन। भैरव-पात्र—यति, अनुपस्थिति में जल में विसर्जन। बलि-पात्र—कापालिक, अनुपस्थिति में जल में विसर्जन। शेष अन्य पात्रों के अमृत को जल में विसर्जन करे। नैवेद्य गुरु को

---

[२९] स्थायी रूप से प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र पर देवता-विसर्जन भी आवाहन के सदृश नहीं किया जाता है।

देकर तब उनके हाथ का प्रसाद ग्रहण करे। गुरु की अनुपस्थिति में बन्धु-गण के संग प्रसाद ग्रहण करें।

अन्त में शान्तिस्तोत्र का पाठ करे। यथा—

जयन्तु मातरः सर्वाः जयन्तु योगिनी-गणाः।
जयन्तु सिद्धि-डाकिन्यो जयन्तु गुरु-पंक्तयः ॥१॥
जयन्तु साधका सर्वे विशुद्धाः कौलिकाश्च ये।
समयाचार-सम्पन्ना जयन्तु पूजका नराः ॥२॥
नन्दन्तु चाणिमा सिद्धा नन्दन्तु कुल-पालकाः।
इन्द्राद्या देवताः सर्वे तृप्यन्तु वास्तु-देवताः ॥३॥
चन्द्र-सूर्यादयो देवास्तृप्यन्तु मम भक्तितः।
नक्षत्राणि ग्रहा योगाः करणा राशयश्च ये ॥४॥
ऋषयो ब्राह्मणा सर्वे शान्तिं कुर्वन्तु सर्वदा।
शुभा मे वन्दिताः सन्तु मित्रास्तिष्ठन्तु पूजकाः ॥५॥

श्री काली पूजा-यन्त्र
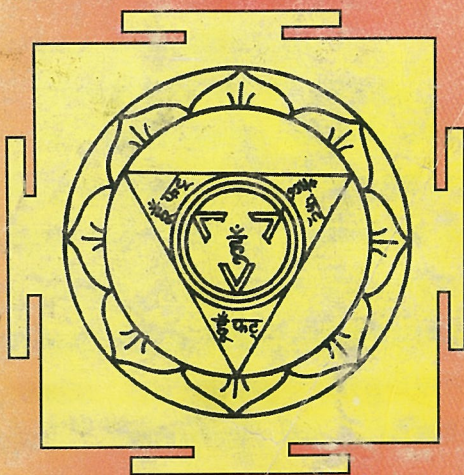
साधनोपयोगी साहित्य
हेतु
'चण्डी'
(सचित्र पत्रिका)
पढ़ें।
विस्तृत जानकारी के लिए सम्पर्क करें।